❀ श्रीश्रीगौरहरिर्जयति ❀

* श्रीब्रह्मसंहितादिग्दर्शिनीटीका की भाषा *

महाप्रभुश्रीगौरांगदेववीथिपथिक—
श्रीरामकृपाजी कृता

गोस्वामिश्रीकृष्णचैतन्यदेवोपनामनिजकवि-
विरचित श्रीमद्राधारमणप्रथम-
सिंगाराष्टक सहिता

श्रीराधिकाष्टमी
सम्वत २०१७
न्योंछावर ॥=)

प्रकाशक—
कृष्णदासबाबा,
कुसुमसरोवर निवासी (मथुरा)

❀ बड़े बाबाजी श्रीश्रीराधारमणचरणदासदेवो जयति ❀

भज–निताइ गौर राधेश्याम ।

जप–हरे कृष्ण हरे राम ॥

श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द ।

हरे कृष्ण हरे राम राधे गोविन्द ॥

–कृष्णदास

नम्र निवेदन

अनादि आदि सर्व कारण कारण सच्चिदानन्द-विग्रह श्री वृन्दावनस्थ श्री श्रीगोविन्द ने सृष्टि के पूर्व श्रीब्रह्माजी को अपना निजीय स्वरूप दर्शन और तत्त्वोपदेश प्रदान कर स्व-संप्रदाय प्रणाली की परम्परा प्रचलित की वही आदि संप्रदाय श्री ब्रह्म (श्री मन्माध्व गौडेश्वर) संप्रदाय है।

प्रस्तुत श्री ग्रंथ में 'साध्य' 'साधन'-स्वरूप स्तुति के द्वारा जो 'तत्व' एवं 'रस' वर्णन किया गया है, वह मनन करने के योग्य है। स्वदेशी एवं विदेशी विधर्मियों के विद्वेपात्मक आक्रमणों से यह ग्रंथ अप्राप्य था। जगतपावन, प्रेमपुरुषोत्तम भगवच्छ्री गौरचन्द्र ने दक्षिणयात्रा के फल स्वरूप इस ग्रंथ को प्राप्त किया और अपने प्रिय पार्षद षड् गोस्वामि वर्ग को 'तत्व' प्रचार के लिये प्रदान किया। श्रीचैतन्यचरितामृत मध्यलीला नवम परिच्छेद में—

महा भक्त गण सह ताहाँ गोष्ठी हैल।
ब्रह्म-संहिताध्याय ताहाँइ पाइल ॥
पुथि पाइया प्रभुर आनन्द अपार।
कम्प-अश्रु-स्वेद-स्तम्भ पुलक विकार॥
सिद्धान्त शास्त्र नही ब्रह्मसंहितार सम।
गोविन्द महिमा ज्ञानेर परम कारण॥
अल्प अक्षरे कहे सिद्धान्त अपार।
सकल वैष्णव शास्त्र मध्ये अति सार॥
बहु यत्ने सेइ पुथि निल लेखाइया।
अनन्त पद्मनाभ आइला हरसित हैया॥ इत्यादि।

ब्रह्मसंहिता के साथ कृष्णकर्णामृत का भी आपने प्राप्त किया था।

ब्रह्मसंहिता कर्णामृत दुइ पुथि पाञा।
महारत्न प्राय पाइ आइला संगे लईञा॥ इत्यादि।

इस सिद्धान्त पूर्ण ब्रह्मसंहिता ग्रंथ के काठिन्य को देखकर सर्व साधारण को बोध गम्य हो इस हेतु से अखिलाम्नायज्ञ शिरोमणि दशदिगन्त विजयि श्री मज्जीवगोस्वामि प्रभुवर ने देवभाषा में इसकी टीका की रचना की। श्रीचरण की टीका सरल एवं पांडित्य पूर्ण होने पर भी हृदयंगम करना सहज न था। अतः मूल एवं टीका के भावार्थ को समझाने के लिये विद्वच्छिरोमणि कविवर श्रीरामकृपा जी ने सरस वृजभाषा में पद्यात्मक टीका की रचना कर महान् उपकार किया है। कविवर ने श्री वृन्दावनस्थ श्रीमन्माध्वगौडेश्वराचार्य श्रीराधारमण-सेवाधिकारि श्रीरामकृष्ण गोस्वामी जी की आज्ञा से रचना की है। यथा—

"कठिन संस्कृत जानि टीका यह दिग्शर्शिनी।"
"राम कृष्ण मन आनि भाषा याकी होइ भली॥"
"तासु हेतु पहिचानि राम कृपा भाषा रची।"
"है सज्जन सुखदानि मोहि न दीजौ दोष कछु॥"
"राम कृष्ण एक समै सुखारी। प्रेर्यौ मोकहुँ हृदय विचारी॥"

यह श्रीरामकृष्णगोस्वामी जी श्रीमद्गोपालभट्ट-गोस्वामि प्रभुवर के अधःस्तन षष्ट पीड़ी में थे। उन्हीं श्रीगुरुदेव की आज्ञा प्राप्त कर अपने इष्टदेव श्रीराधारमण एवं श्रीमच्चैतन्य महाप्रभु की वन्दनाकर ग्रंथ लिखा। ग्रंथकार के संबन्ध में विशेष परिचय प्राप्त न होने से जीवन संवन्ध की घटनाओं का उल्लेख न हो सका, किन्तु किस समय आप विद्यमान थे, य आपकी रचना काल से ज्ञात होता है—

सुर वैद्य अरु युग्म वसु इन्दु सुवत्सर जानु।
आश्विन कृष्ण भानु तिथि शशिसुत वार प्रमानु॥

इसके द्वारा आप १८२२ संवत्सर में विराजमान थे। कवि ने काव्य में सरसता के लिये प्रायतः 'ब्रह्म' 'ब्रह्मा' 'अज' शब्द

का प्रयोग न करके मधुर 'कंजसुत' का व्यवहार कर सरसता दिखलाई है। अस्तु इधर भजन परायण के कारण श्रीगौडीय-वैष्णव गण अपना विपुल संस्कृत, वंगभाषा एवं वृजभाषा, श्रौड़ भाषा के महान् साहित्य ग्रन्थों के विस्मरण से हो गये थे। जिन ग्रन्थों की सूची ६५०० + ७००० के समकक्ष है। समय की गति ने करवट बदली। इस अभाव पूर्ति के लिए हमारे प्रिय सुहृद गौर गत प्राण श्री हरिदासदासजी ने लुप्त ग्रन्थों की खोज प्रारम्भ की और उनको बहुसंख्या से प्रकाशित किया। किन्तु इसीमध्य में श्री गौरसुन्दर ने उनको अपनी सेवा में बुला लिया। यह कार्य अधूरा पड़ा था कि 'हृदि यस्य प्रेरणया' के द्वारा हमारे वात्सल्य भाजन बाबा कृष्णदास कुसुमसरोवर वाले ने यह महान् बोझा उठाया है। श्रीगौरसुन्दर के प्रेमियों से मेरा अनुरोध है कि वह इन को तन मन और धन से सहायता कर यश के भागी बने। शेष में पुनः श्रीकृष्णदास को शुभाशिः करता हूँ कि वह चिरंजीवी हो और श्रीगौर गौरव ग्रन्थ-माला को भक्तजनों के कंठ में सुशोभित करें। हमारे अत्यन्त स्नेह भाजन, श्रीगदाधर भट्ट वंशज श्रीनंदनन्दन एवं गोपाल भट्टजी दोनों भ्राता अठखम्बा श्री वृन्दावन निवासी के प्राचीन ग्रंथागार से यह ग्रंथ प्राप्त हुआ है इसके लिए प्रकाशक एवं ग्रंथ दाता को अनेकानेक धन्यवाद है।

बड़ौदा विश्वविद्यालय के श्री चैतन्य सम्प्रदाय के हिन्दी कवियों के रिसर्च स्कालर श्रीमान् नरेशचन्द्र जी बंसल, कासगंज वालों ने इस पुस्तक की प्रेस कापी लिखकर बड़ा उपकार किया है।

निवेदक—
गोस्वामि दामोदराचार्य

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, रविवार
सं० २०१७ श्री वृन्दावन

अथ गुसांई कृष्णचैतन्यकृत

श्री राधारमणजू को शृंगाराष्टकं

सोरठा–द्वै ससि दोय चकोर द्वै वपु एकै तन धर्‌यौ।
जै जै जुगलकिशोर विदित नाम राधारमन ॥१

चंद्रका को श्रिंगार–

सुंदर सचिक्कन सुढ़ार स्याम सोहै वपु
महालावन्य धाम लटक निज अंग की।
कोमल चरन कौंर नटबर ढोर मोर
पोर पोर छोर छबि कोटिक अनंग की।
बंक गति लंक तैं सुअंक लौं तिरीछे ठाढे
मृदु कर कीन्हे मुद्रा वेणु के प्रसंग की।
कुंडल श्रमन सीस चंद्रिका नमन जै जै
राधिकारमन लाल ललिता त्रृभंग की॥

तनियाँ को श्रिंगार–

किंकिनियाँ कनियाँ पैजनियाँ पगनियाँ की
ओलाईवियाँ मै सुभूषन उतारिकैं।
छबि छलकनियाँ माखनियाँ मृदुल अंग
ललित त्रृभंग लटकनियाँ सुढारिकैं।
नील मनियाँ से गाल लालमनियाँ से होठ
मंद मुसकनियाँ पै वेसर संवारिकैं।
सैन समै कै सोवन ठाढो है चिकनियाँ सो छयल
छिकनियाँ सो तनियाँ सिंगारिकै॥

8/24

कुलरू को श्रिंगार--

वनक कनक रंग वड़ी औ वसन वागौ
वांक वलयादि वाज गहे गह गहयै ।
हिये बीच हरिन के हारन पै हार तापै
मोतिन की माल कों सिंगारी तह तहये ।
कलगी को जसन जलूस मोर सिषाहू को
निज जू धुजा ज्यौं रूप सागर के दहये ।
कुंडल मडोड पै जवाहर दुछोर छोर छोगा
जटित जड़ाऊ जोड़ ह्यु क्यौ है कुलहये।।४

टिपारे को श्रिंगार--

नटबर ढर ढारो पग अरूनारो तापैं
नख उजियारो निज कवि कु जतारो है ।
एक डारो हीरा ही को टोडल वजन वारो
कटि पट कंचन पै पटका ढरारो है ।
लंक लचकारो ठारो ललित त्रिभंग प्यारो
धारो हिय हारो नासा वेसर संवारो है ।
दृग अनियारो भोरो मुख मुसिक्यारो काँन
कुंडल निहारो सीस सोहत टिपारो है ।।५

मुकुट को श्रिंगार-

छैल छवि सलित पैं छलित मनोज कोटी
कुसुम कलित चोटी एडीलौं षलित है ।
अलकैं डुलित कंज नैंन प्रफुल्लित बाँकी
भौंह की ढ़लित नासा सरों सी फलित है ।
मुकुलित विंवाधर वेसर हलित निज
वाँसुरी ललित वाहु वलया वलित है ।

हारन रलित काँन कुंडल चलित हीरा
मुकट ललित कोटि चन्द्रमा ज्वलित है ॥६

जूड़े को श्रिंगार–

हीरन के हार की अपार दुति अङ्ग-अङ्ग
ललितत्रिभंग निज कोमल अगार है ।
तास की इजार तापै काछनी कछी है चारू
बाँसुरी अधर धार नटवर ढार है ।
भौंहँ छतनार नैना खंजन से पंखदार
झूल्यौ लटवार द्वै कपोलन के पार है ।
कुंतल सिंगार काँन कुंडल मयूराकार
जटित जराऊ सीस जूड़े की बहार है ॥७

नटवर को श्रिंगार—

जटित जराऊ जगमगत टिपारो सीस
जाहर जलूस निज कलगी मयूर की ।
जौंहर जवाहर के कुंडल जरव दार
जालम जुलफू जोर जोवन गरूर की ।
कजदार भौंहैं जेर जहरी जुलम आँख
जलज बुलाक जेब होठन के नूर की ।
पटुका जरद जरतारी जंघ जाँघिया पैं
जोत बिजली की होत हालत कपूर की ॥८

पाग को श्रिंगार–

बाँकी भाल बैंदी भौंहैं भृकुटी जड़ाऊ बाँकी
बाँकी सिर पैंच पाग मोर पिच्छ टाँकी है ।
बाँकी श्रौन कुंडल औ कुंतल अलक बाँकी
द्दग की चलांकी भरी ऐन सुखमा की है ।

निज कवि नासिका की जलज बुलाक बाँकी
अधर सुधा की छाकी बाँसुरी अदाँ की है ।
पीतांवर पटुका की ललित त्रिभंग ताकी
राधा रौंन प्यारे थाँकी झाँकी अति बाँकी है ॥६

जै जै जै राधारमन जुगल वेष वपु एक ।
देहुँ लड़ैती स्यामघन चित चातिकलौं टेक ॥
जै जै जै राधारमन विंवि तन एकै देहु ।
चारू चरन नखचंद्र को निजचकोर करि लेहु ॥

सोरठा—निज कवि निज श्रिंगार निज करि जो गावै सुनैं ।
राधारमन उदार तत छन हिय में झलमलैं ॥

विनती की कवित्त—

पूरन सुकृत फूल श्रीभट गुपाल जू के
भक्त महिपाल जू के संकट समन जू ।
दौरे गजराज काज लाज राखी द्रोपती की
धार्यौ गिरिराज देव मद के दमन जू ।
निज दासी दीन दुख हरन चरन चारू
सुख के करन सदा संपदा भमन जू ।
मुरली लकुट बारे चंद्रिका मकुट वारे
दुरित हमारे दरो राधिकारमन जू ॥१
दिन दिन दूनो दूनो समैंयौं दुसह जात
दाता दुखी दारिद दसो मदुरे माषिये ।
दुष्ट दनुजन माँहि दौलत दराज दीखै
दरदन दारी दगा दारी दस लाखिये ।
दिसि दिसि दौरि दौरि कलि जू दमामो देत
दामोदर देव निज दास अभिलाखिये ।

दीनबंधु दीनानाथ दीन के दयाल दानी
द्रुपत दुलारी लौं हमारी लाज राखिये ॥२
हम अति घोर पापी लंपट कुटिल बुद्धि
कुमति सुभाव रचि हाहा मति खीजियो ।
आप ही हौ कारन भक्त निरधारन के
एहो सरवज्ञ जगदीस सुनि लीजियो ।
निज तो मनुज कीट दुरसज तिहारी माया
निग्रह अनुग्रह रूचै सो न्याव कीजियो ।
सरण तिहारी प्रणतारतहरण नाथ
राधिका रमन जू चरण रति दीजियो ॥३
दोहा—श्रीगुरु भट्ट गुपाल के परम लड़ैते लाल ।
वंदौं श्रीराधारमण सरणागत प्रतिपाल ॥

इति श्री गोस्वामी कृष्णचैतन्य-देवोपनाम
निज कवि विरचितं श्रीमद्राधारमण प्रथमं
श्रिंगाराष्टकं सम्पूर्णम् ।
संवत् १६२२

❀ श्रीकृष्णाय नमः ❀

श्रीब्रह्मसंहितादिग्दर्शिनीटीका की भाषा

वंदौ श्री वृजनाथ कृपा सिंधु राधा-रमन ।
तारे अमित अनाथ निगम साषि जग जस प्रगट ॥१॥
पुनि वंदौ पद कंज जासु प्राण वृषभानुजा ।
नासहि जन अघ पुंज जिन जब जहँ सुमिरयौ सकृत ॥२॥
वंदौ विवि कर जोरि महाप्रभू पद कंज वर ।
बहु विधि ताहि निहोरि जिन तारयौ बहु अधम नर ॥३॥
दोहा—सुपद कृष्ण चैतन्य पद वंदौ छिति धरि सीस ।
कलि जीवन कै हेतु हरि प्रगटे श्री जगदीश ॥४॥
जगत ईस जे त्रय कहे तासु ईश जे कोइ ।
सोई प्रगटे सख्यात जनु अपर न दूसर कोइ ॥५॥
पुरुषोत्तम जे क्षेत्र वर तहाँ सची सुत जाइ ।
चारि तहाँ धारी भुजा लषे सवन चित चाइ ॥६॥
तहाँ कोउक नर विमुष जे कहीं वचन विपरीति ।
होत चतुर्भुज सब इहा काक आदि सुभरीति ॥७॥
भये सीघ्र प्रभु षटभुजा देषि चकित सब भूप ।
आइ गहि तिन सरण तब किये सिष्य सुष रूप ॥८॥
नाम कृष्ण चैतन्य कोउ कहै सहज मुष गाइ ।
होइ भक्ति तेहि कों सुखद भवरुज जाइ नसाइ ॥९॥
गौड़ देश के विमुष नर तिनकहु भक्ति द्रिढाइ ।
संसृति सिंधु अपार तरि गये कृष्ण मुष गाइ ॥१०॥
सोरठा—वंदौ पद वर धूरि संतत मन वच काय करि ।
तरे जीव जड़ भूरि श्रीरूप सनातन की कृपा ॥११॥

भये सिष्य द्वै तासु रूप सनातन इंदुसम ।
विमुष सुधारयौ आसु भक्ति सुधा रस वरषि जग ॥१२

चौ०-विदित सुजस भूषंड मंझारा । जसुमति सुत जेहि सदा पियारा॥
अरस परस निस दिन सब काला । नंद सुअन रस मत्त कृपाला ॥
श्री वृंदावन वास सदा ही । रुचै निरंतर अनत न जाही ॥
जीव स्वामि अति परम पुनीता । जग उपकार कीन भलि रीता ॥
वंदौ संतत पद मैं तासू । अति कृपाल सुंदर सुष रासू ॥
वंदौ पुनि पुनि चरण सरोजा । सुमिरत रहै न मोह मनोजा ॥
कियेउ ग्रंथ वहु सुभग रसाला । पंडित जन सुनि होहि निहाला॥
भक्ति रसासव सरित प्रवाहू । करी प्रगट सव कंहु रस लाहू ॥
सुधरे सठ पावर वहुतेरे । कुमती कूर कुचालि घनेरे ॥
तिनकी दिष्टि परे जे कोई । भये कृतारथ भव रुज षोई ॥
विदित वात यह जग सवकाहू । पिये कृष्ण रस अपर न चाहू ॥
जद्यपि शत अध्याय सुहावन । अहै संहिता विदित सुपावन ॥
तद्यपि यह अध्याय अनूपा । कृष्ण रसासव वहु सुख रूपा ॥
है सूत्राख्य नाम एहि केरो । परम पवित्र अर्थ द्रग हेरो ॥
सो एक वार निरषि मन वानीं । एहि सम अपर न जग में जानीं॥
ता पर टीका अहै घनेरा । सो तौ हम नहि निज द्रग हेरा ॥
इह दिगदरसनी नाम पुनीता । रच्यो गोसाइ जीव सुभ रीता ॥
सो निरष्यो मन दै एक वारा । देव गिरा अति कठिन विचारा ॥
अमित कर्म के प्रेरक ईसा । अपर न कोउ मम मन अस दीसा ॥
राम कृष्ण एक समै सुषारी । प्रेरयो मोकहु हृदय विचारी ॥
सुर वानी यह कठिन अनूपा । समुझि परै सव कहु सुष रूपा ॥
तासु हेतु लषि मैं सुष पावा । राम कृपा भाषा करि गावा ॥

सोरठा-निज मति के अनुसार भाषा यह दिगदरसनी ।
अहै सकल रस सार निरषहु सज्जन सुमति जन ॥१॥

सुनत गुणत सुष भूरि उपजै भक्ति अनन्यता ।
जो भवरुज कहु मूरि परसत ही विधि-संहिता ॥२

वंदौ संत सभा सब काहू । जाकहु यामै है अति चाहू ॥
सुनहु गुणहु संतत सब काला । यामह कृष्ण रसासव जाला ॥
राषेहु गुप्त जतन करि भूरि । नहि दीजो जेहि मति नहि रूरि ॥
अरु सठ कृपन क्रूर मति मंदा । कृष्ण कथा सुनि हिय न अनंदा ॥
तासु श्रवण डारहु जनि भूली । रहे जे विषइक रसमह फूली ॥
पर निंदा पर धन पर दारा । इन मंह रुचि संतत हिय धारा ॥
अरु परम नित सोहाइ न जाही । असहन सील सुभाव सदाही ॥
पर उपकार न मानहि कासू । संतत रुचि मन विषय विलासू ॥
अैसे न कहु दीजौ न कवहू । अरुगत लाज कुटिल संततहू ॥
अरु हरि कथा विमुख जे प्रानी । कोउ किन होइ अपर गुणषानी ॥

सोरठा—बिनु अधिकारी कोउ ताहि न दीजो भूलि करि ।
भूमि देव किन होउ तदपि दिये लघु दोष वड ॥२

॥ श्रीकृष्णचंद्रो जयति ॥

कृष्ण रूप श्री रूप प्रभु महिमा तासु अपार ।
मम चित करउ प्रकाश सोइ उपजै सुभग विचार ॥१

सोरठा-लहि प्रसाद हिय तासु रचौ कंजसुत संहिता ।
कठिन अर्थ है तासु होइ बुद्धि सुविचार युत ॥२
ताहि रचत हे नाथ तुम सब ऋषिगन के मुकुट ।
तुम मोहि कीन्ह सनाथ मो गति है तव कंज पद ॥३
विनवौ पुनि कर जोरि श्री गुरु परम उदार निधि ।
अहै बुद्धि अति थोरि किमि तव महिमा कहि सकौ ॥४

चौ०-सत अध्याय युक्त सुषधामा । प्रगट संहिता है सब ठामा ॥
तद्यपि यह अध्याय अनूपा । सूत्र रूप सब गत सुपरूपा ॥
श्री भागवत पुराण सुहावन । तेहि ते आदि अपर जो पावन ॥

देष्यो सकल बुद्धि करि रूरी । अपर संहिता वहु गुण भूरी ॥
पुनि यह व्रह्म संहिता देखी । मो मन भा सुष हरष विशेषी ॥
कृष्ण नाम संदर्भ सुषारी । वरन्यो तहाँ अर्थ विस्तारी ॥
इत समास करि सोइ सुष रूपा । कृष्ण नाम गुण अमित अनूपा ॥
सो मैं कहौं यथारथ रीती । कृष्ण रसा सव तहँ मम प्रीती ॥

श्लोक—ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्दविग्रहः ।
अनादिरादिर्गोविन्दः सर्व्वकारणकारणम् ॥१॥

श्री शुक सुषद भागवत गायौ । भवनिधि रुज कह मूरि वतायो ॥
एते चांस कला इमि भाषे । कृष्ण व्रह्म पूरण करि राखे ॥
अहै अधिक तें अधिक विसेषा । कृष्ण नाम सम अपर न पेषा ॥
जव अवतार लीन भगवंता । श्री शुक आदि मुनीस अनंता ॥

दोहा—गायो तिन सव मिलि तवै कृष्ण सरिस नहि कोउ ।
साम उपनिषद मैं कह्यो व्रह्म प्रगट लघु सोउ ॥२

चौ०-नामकरण दिन गर्ग वषांना । कृष्ण नाम यह अहै प्रधाना ॥
अहो नंद तव सुअन सभागी । एहि के पद कोउ ह्वै अनुरागी ॥
सो कृत कृत्य भयौ तै जानू । अपर सुनौ एक सुंदर गानू ॥
कवहुक तव सुत देवक तनया । जायौ तासु गर्भ श्रुति भनया ॥
अपर प्रभास पुराण मझारू । कृष्ण नाम महिमा अतिभारू ॥
कुसधुज नारद करत विचारा । श्री मुष तँह भगवंत उचारा ॥
सुनियै नारद वचन हमारा । नाम मुष्यतर कृष्ण हमारा ॥
पुनि व्रह्मांड-पुराण अनूपा । ता मह कहेउ सो एहि अनुरूपा ॥
पढ़ै सहस्र नाम त्रय वारा । लहै जु फल अतिसै नर भारा ॥
सो फल लहै सहज सुष भाये । कृष्ण नाम एक वारक गाये ॥
अति उत्कृष्ट नाम यह पावन । है सर्वोपरि सुषद सुहावन ॥
आगे याहि संहिता माही । नाम गोविंद कहव चितचाही ॥

दोहा—सो गवेंद्र पद नाम वर अपर न जाँनहु कोइ ।
नाम कृष्ण कर तेहि लषहु अहै विशेषण सोइ ॥२

सोरठा—अपर रूढ़ि वल जानु नाम प्रधान जु कृष्ण वर ।
कृष्ण सनातनु मान वेद वचन अैसेहि कही ॥३

ईश्वरादि जे नाम वखानू । कृष्ण विशेषण सो सव जानू ॥
गुण द्वारा फिरि कृष्ण कृपाला । पूरण ब्रह्म नंद को लाला ॥
गर्ग वचन तहँ अहै प्रमानू । कह्यो नंद प्रति सव जग जानू ॥
नंद सुअन तव जग सुषदाता । प्रगट्यो कृष्ण वर्ण सव गाता ॥
प्रति युग जे अवतार अनेका । इनते प्रगटे गहहु विवेका ॥
स्वेत रक्त अरु पीत अनूपा । प्रगटे जे जे जह सुष रूपा ॥
सकल प्रकास वस्तु जग जेती । एहि तें होहि प्रकासक तेती ॥
नंद सुअन तव अहै प्रकासी । या कहँ कहै वेद अविनासी ॥
तव सुत गुण अरु कर्म अनेका । नाम बहुत पुनि अहै न एका ॥
सो सव मैं जानौ भल रीती । अपर न जानै मति विपरीती ॥
अव यह प्रगट रूप सुषसागर । कृष्ण वर्ण यह ब्रह्म उजागर ॥
अंतर भूत सकल अवतारा । याके मध्य अहै निरधारा ॥

दोहा-अव यह अति उत्कृष्ट वर कृष्ण सुअन तव नंद ।
है अवतारी ईस प्रभु सकल लोक सुष कंद ॥४

चौ०-पुनि सवको करता है एही । आकरषत विनु श्रम जेति तेही ॥
कृष्ण मुख्यतर नाम सुजाना । वेद तंत्र महँ किय इमि गाना ॥
कृषि सू वाचक शब्द कहावै । न निवृत्ति मुनि गण सव गावै ॥
उभय एकता करि कै देषू । कृष्ण ब्रह्म यह परम विशेषू ॥
योग वृत्ति करि साधत जोई । कृष्ण नाम परिपूरण सोई ॥
कृषि जु शब्द सत अर्थ कहीजै । नश्च शब्द आनंद भनीजै ॥
सत आनंद एक करि दोऊ । कृष्ण नाम वाचक है सोऊ ॥
सवतै अहै वृहत तम जोई । देषिय प्रगट कृष्ण यह सोई ॥

सब कहु करै वृद्धि जो कोई । प्रगट लषौ यह अपर न होई ॥
विष्णु पुराण माझ इमि भाषा । कृष्ण ब्रह्म कहँ सब श्रुति साषा॥
वृहत गौतमी तंत्र विचारू । यहि अनुकूल वचन सुपसारू ॥
दोहा–अहै कृष्ण परब्रह्म लषु सकल वस्तु को मूल ।
लषै शास्त्र बहु सुमति युत मेटि सकल भ्रम भूल ॥५
सोरठा–अपर विदुष जे कोइ गहे वाद अद्वैत कहु ।
तिन निश्चै करि सोइ कहेउ कृष्ण परब्रह्मसत ॥६
चौ०-सत आनंद वस्तु जो गावा । उभय मिले सोइ ब्रह्म कहावा ॥
अहै पदारथ सत जे कोऊ । ताहि प्रवृत्ति हेतु जे सोऊ ॥
अति उतकृष्ट अहै सत गाये । सो श्रुति जसुदा नंद बताये ॥
द्वै सत तुम कैसे करि कहहू । जो कोउ पूछै तहँ तुम सुनहू ॥
है अभिन्न अभिधेय विचारू । जैसे तरु अरु व्रिछ विचारू ॥
एक विशेष विशेषण भाऊ । उपमा अरु उपमेय बनाऊ ॥
एक वस्तु कर करि परिहारू । लषहु एक वस्तु निरधारू ॥
पूरव गौतम वचन निहारी । कर्षण शक्ति विशिष्ट विचारी ॥
पूरण ब्रह्म कृष्ण सुषरासी । सत चित अरु आनंद प्रकासी ॥
सब आकर्षण शक्ति प्रकारा । कृष्णदेव महँ वेद उचारा ॥
है सुषरूप कृष्ण भगवंता । जासु कर्म गुण लहिय न अंता ॥
यातै जीव तहाँ जब जाई । सहजै तब सुष रूप लहाई ॥
दोहा–जीव ताहि कैसे लहै जौ पूछे इत कोइ ।
तासु हेतु सुनियौ सुजन हिय कुतर्क सब षोइ ॥७
चौ०-प्रेम भाव तें तनमय होई । अपर भाँति सुष लहै न कोई ॥
एति तें कृष्ण रूप गुणभारी । परम वृहत हैं अति सुषकारी ॥
आकरषण हरि शक्ति अनूपा । अरु आनंद कंद सुष रूपा ॥
कृष्ण वाच्य सब सब्द बषाना । सो देवकि नंदन मह जाना ॥
वसुदेव नाम उपनिषद माही । कह्यो बहुत विधि अपरसु नाहीं ॥

निषिल जगत कहँ आँनद दानी। देवकि नंदन वेद वषाँनी ॥
कृष्ण सब्द कर सुनहु वषाँना। स्याम तमाल वर्ण अनुमाना ॥
जसुमति दूध पियो भगवन्ता। रूढि भाव पर ब्रह्म अनंता ॥
अपर ठाम यह सत्य न जाई। कह्यो भट्ट इमि वचन सुनाई ॥
श्री भागवत मैं शुकवाँनी। प्रगटे परमब्रह्म सुषदानी ॥
जासु मित्र परमानंद रूपा। पूर्ण सनातन ब्रह्म अनूपा ॥
विष्णु पुराण माझ एहि रीती। कृष्ण ब्रह्म है परम प्रतीती ॥

दोहा—ब्रह्म नराकृत प्रगट जग गोकुल जन सुष हेतु।
अति अनंद तिनकहु दयो अैसे कृपा निकेतु ॥८॥

चौ०-पुनि गीता मह श्री मुख कहेऊ। सब जग ब्रह्म प्रतिष्टा अहऊ ॥
वहुरि गोपाल तापनी माँही। एहि विधि वचन कह्यो वहु चाही ॥
जो यह गोप रूप जगदीसा। जानहु परम ब्रह्म पर ईसा ॥
कृष्ण नाम कर कहेउ प्रतापू। सुनत जाहि नसि भव संतापू ॥
तेहि ते ईश्वर शब्द वषाँना। वृहत गौतमी तंत्र प्रमाना ॥
सकल चराचर जासु अधीना। नहि स्वतंत्र कोउ अपर प्रवीना ॥
अपर अर्थ एक सुनहु सयाने। कृष्ण नाम जिमि मुनिन वषाने ॥
यह जग सब चर अचर जहाँतें। काल रूप ह्वै हरै तहाँ तें ॥
कलपति नाम नियंता तासू। काल रूप जो जगहर आसू ॥
तृतिय माँझ पुनि एहि विधि भाषा। श्री शुक कछु दुराय नहि राषा ॥
स्वयं कृष्ण सम अपर न कोई। त्रय अधीस है ईश्वर सोई ॥
लोकपाल वलि जाकहु देही। चरण सीस धरि सेवहि तेही ॥

सोरठा—तासु पीठ ढिग जाई लोकप अमित किरीटयुत।
नुति वहु करत वनाइ वार वार भू परसि सिर ॥९॥

चौ०-पुनि श्री गीता महँ प्रभु भाषे। अपर वचन इत लघु करि राषे ॥
एक अंस करि मैं सब लोका। थिति करि रहउ चराचर थोका ॥
संभव करि पालउ संघरऊ। पुनि पुनि रचना वहु विधि रचऊ ॥

अपर गोपालतापिनी माँही। असें बचन कहे चित चाही ॥
एक कृष्ण पर ब्रह्म विचारू। अपर न कोउ है अस सुष सारू ॥
है सर्वज्ञ सर्वगत एकू। कृष्ण ब्रह्म यह लषहु विवेकू ॥
सकल चराचर जहँ लगि प्रानी। तासु प्रान निज बस करि आनी ॥
सकल नियंता प्रभु जगदीसा। कृष्ण ब्रह्म ईसन के ईसा ॥
नंदसुअन ईश्वर है जातै। नाम परम वरन्यौ है तातै ॥
अति उत्कृष्ट रमा जगमाही। अहै शक्ति जाकी सब पाही ॥
दशम माझ फिरि इमि करि गाये। परम ब्रह्म श्री कृष्ण बताये ॥
परिपूरण निजगुण अति भारे। रमत राधिका संग निहारे ॥

दोहा—श्री न लह्यो अस परम सुष जस वृषभान कुमारि।
जासु संग नहि तजत छिन परम पुरुष गिरधारि ॥१०॥

सोरठा—सिंधु सुता जेहि नाम लह्यो न तस आनंद तिन।
सकल सुषन को धाम लही एक वृषभानुजा ॥११॥

चौ०-तासु संग सोभित मन मोहन। निरषत वदन तासु सुठि सोहन ॥
सिंधु सुता कांत है जासू। जसुमति सुत अषिलेस प्रकासू ॥
दैवत परम जसोमति नंदन। भूमिभार हर असुर निकंदन ॥
परम दैव भू प्रगट विराजा। एहि तें आदि शब्द तेंहि छाजा ॥
पुनि उद्धव के वचन प्रमाणा। दशम माझ पुनि करयौ वषाना ॥
जरासिंधु जब जीतिन गयेऊ। उद्धव तब उपाय यह कहेऊ ॥
है हरि आदि कृष्ण भगवाना। सोइ उपाय है अपर न जाना ॥
कहेउ एकादश मह सोइ वाता। अहै सकल जग सौ विख्याता ॥
पुरुष ऋषभ पुनि आद्य वषाना। कृष्ण आदि सबको भगवाना ॥
एहि अवतार करे जो भाऊ। अदि शब्द अनपेक्षिक चाऊ ॥
कृष्ण अनादि आदि नहिं तासू। है सर्वज्ञ सकल सुषरासू ॥
एक नियंता सब कहु सोई। कृष्ण विना जग अपर न कोई ॥

छंद—नहि अपर कोउ तेहि सरिस निहुपुर माझ श्रुति इमि भाषही।

सब आदि हु की आदि लषि शुक आदि मुनि हिय राष ही ॥
जेहि देव मुनि ऋषि नित्य वस्तु वषानि हिय अभिलाषही ।
सोइ नित्यहु को नित्य करता कृष्ण कलि मल नासही ॥ २॥
सोरठा–एहि विधि सबकी आदि अहै जसोमति को सुअन ।
याते कहत अनादि कारण को कारण लषहु ॥१३॥
चौ०-बहुरि तापिनी मांझ वषाना । महत स्रष्ट जो पुरुष सुजाना ॥
देवकि नंदन कारण तासू । आदि सनातन परम प्रकाशू ॥
पुनि श्री दशम माहि वखाँनी । कही देवकी सुत वर जाँनी ॥
जासु अंस है पुरुष गोसाईं । तासु अंस यह प्रकृति सोहाईं ॥
तासु अंस त्रयगुण जे गावा । तासु भाग परमान वतावा ॥
तासु लेस करि यह जग सारा । उपजै थिति लय सकल विकारा ॥
ताकह आश्रय तुम जग नायक । जन रक्षक तुम सव सुषदायक ॥
मैं तव कंज शरण जदु नंदा । निज जन पालक आनद कंदा ॥
बहुरि दशम के माहि वषाना । कंज सुअन अस्तुति जव ठाना ॥
है जल अयन जासु जग जाँना । नारायण सोइ नाम वषाँना ॥
अथवा सकल नरन मँह वासू । नारायण यह नाम प्रकासू ॥
अहै अंग तव एहि ते जाना । कृष्णदेव अंगी करि माना ॥
दोहा-अद्वितीय हरि सकल को कारण अहै अनूप ।
तेहि सम अपर न संभवै कृष्ण ब्रह्म सुषरूप ॥१४॥
सोरठा–कोउ मन संका आनि इमि पूछै सुविचारयुत ।
निज मति कह्यो वषाँनि कृष्ण ब्रह्म आनंद घन ॥१५॥
जो अनंद है जासु सो नहि विग्रहवान लह ।
कृष्ण नाम किय गानु सो असमंजस किमि घटै ॥१६॥
चौ०-कही सत्य वानी सुषदानी । सुनियै उत्तर कहौ वषानी ॥
स्वयं कृष्ण यह परम अनूपा । वरन्यो जो आनंद सरूपा ॥
स्वयं अनंद सुषाकर मूला । पूर्व पूर्व यह सिद्धनुकूला ॥
अहै सच्चिदानंद सरूपा । ऐसो विग्रह लषहु अनूपा ॥

सोइ पुनि दशम माझ इमि गाये । चतुरान प्रभु लषि सुष पाये ॥
हे प्रभु कृपा सिंधु जन त्राता । निरष्यो यह तव तन सुषदाता ॥
अहो नित्य सुष वोध सरूपा । अपर न कोउ अस अहै अनूपा ॥
पुनि हयग्रीव तापिनी माही । ऐसेहि वरन्यो उन चित चाही ॥
हरि सच्चित. आनंद कंद वर । कृष्ण देव सुषदानि दुषहर ॥
सुभग नाम ब्रह्मांड पुराणा । तहां कृष्ण गुण बहु किय गाना ॥
सत चित अरु आनंद रूप वर । व्रज जन कहु आनंद दानि तर ॥
अचल सत्यता भई इमि गाये । कृष्णदेव महु सहज सुहाये ॥

दोहा—कृष्ण प्रतिष्ठित सत्य महु सत्य कृष्ण के माहि ।
सत्यहु ते जो सत्य कोउ सो सब इतही आहि ॥१७॥

सोरठा—उद्यम पर्व मझार एहि विधि गायो वचन बहु ।
सुनियहु अपर विचार दशम विषे ब्रह्मा कहे ॥१८॥

चौ०-सत संकल्प सदा सब काला । नंद सुअन गुण अमित विसाला ॥
सत्यहु सो जो सत्य अनूपा । सकल सत्य मय कृष्ण सरूपा ॥
अपर देवकी वचन प्रमाना । कहियत इत हे चतुर सुजाना ॥
कंज सुअन आयु खल वीते । होत लोक त्रय लय सव जीते ॥
व्यक्त वस्तु अव्यक्त समाने । काल वेग करि अतिसय जाने ॥
तव तुम एक रहौ असुरारी । अपर न कोउ हे कृष्ण मुरारी ॥
मृत्यु रूप पन्नग भयभीता । भाग्यो यह नर लषि विपरीता ॥
सकल लोक गत फिरेउ विहाला । भय न छूट दुष लहेउ विसाला ॥
कवहुक दैव योग गति पाई । लह्यो कंज पद तव जदुराई ॥
तेंहि छन सुषित होइ सोइ सोवा । गत भव भीति न सो पुनि रोवा ॥
एक ब्रह्म अद्वय सुषरासी । अज अनीह अव्यय अविनासी ॥
ब्रह्म वचन करि एहि विधि गाये । कृष्णदेव परब्रह्म सुभाये ॥

दोहा—पुनि श्री गीता के वचन कहियत सुनहु सुजाँन ।
अहौ प्रतिष्ठा ब्रह्म की यह मम वचन प्रमान ॥१९॥

सोरठा—मैं सबकौ अवलंब चर अत्तर ते हौ परें।
अैसें वचन कदंब सकल सास्त्र मह अमित है ॥२०

जन्म जरा तें भिन्न कृपाला। श्री मुष वचन कहेउ गोपाला॥
अहो मित्र सुनियैं मम वाँनो। गहौ सु निज हिय अति सुषमानी॥
लोक वेद महँ विदित प्रभाऊ। पुरुषोत्तम मैं हौ सब ठाऊ॥
गो गोपन मैं नित मैं रहऊ। पुनि तेहि पालि जतन वहु करऊ॥
जो गोविंद नाम श्रुति गावै। तिनतें मृत्यु महा भय पावै॥
स्वयं प्रकाशक है हरि रूपा। यातै चिन्मय रूप अनूपा॥
तातै पर प्रकाश भगवंता। कहे विमल गुण अमित न अंता॥
पुनि श्री दशम भागवत माँही। सुअन कंज कौ कहँ चितचाही॥
हे प्रभु आद्य पुरुष तुम एका। अहौ पुराण सत्य सुविवेका॥
स्वयं जोति अरु अहौ अनंता। तव गुण रूप न लह कोउ अंता॥
वहुरि तापिनी मै इमि भाषा। कृष्ण देव सब उपर राषा॥

दोहा—जिन पूरव ब्रह्मा रच्यौ पुनि रत्ता किय तासु।
सुर नर वृति प्रकास कर पुनि जसुमति गृह वासु॥२१

सोरठा—जे मुमुत्तु जन कोइ सुष दाता तिनकौ अहै।
अपर न अैसो होइ कृष्णदेव व्यतिरेक लपु॥२२

जासु रूप लषि सकै न कोई। प्राकृत नयन जासु कर होई॥
पुनि जो सरण गहै द्रिढ आसू। ता कहँ सहजहि रूप प्रकासू॥
अव आनंद रूप हरि केरो। कहियत है तेहि चित दै हेरो॥
सकल अंश करि पुरण रूपा। अरु निरपाधिक परम अनूपा॥
प्रेम आस पद देवकि नंदा। एहि गुण युत है श्री व्रजचंदा॥
सो सब कहियत है एहिं ठामा। अपर न है कोउ अस सुष धामा॥
दशम मांझ चतुरानन वाँनी। लिपियत है सब सुष की पाँनी॥
परते पर परब्रह्म सरूपा। किमि इन मै ह्वै प्रेम अनूपा॥
पुनि वसुदेव कही यहि रीती। निज अनुभवित वचनयुत प्रीती॥

तुम कहँ मै जाना हे नाथा । दीन जानि मोहि कियेउ सनाथा ॥
तुम सख्यात ईस यदुनंदा । प्रकृति पार हे आनद कंदा ॥
केवल अनुभव आनंद रूपा । सकल वुद्धि साक्षी सुषरूपा ॥
दोहा–वहुरि कह्यो श्रुति माहि इमि व्रह्मा नंद सरूप ।
सत चित अरु आनंद घन लषियत कृष्ण अनूप ॥२३
चौ०-जो आनंद रूप तुम गावा । ता महँ असमंजस कछु आवा ॥
जो आनंद वस्तु है कोई । सो तौ विग्रहवान न होई ॥
ताहि कहत अैसे समुझाई । सुनिय चित्त है हे सुषदाई ॥
जो आनंद वस्तु है कोई । कृष्ण सरूप जानु तै सोई ॥
नंद सुअन सोइ आनंद कंदा । एहि विधि लषहु होइ सुष वृंदा॥
देही देह सरिस तुम कहहू । तौ पुनि तुम सिद्धांत न लहहू ॥
तहाँ सुनहु सुक मुनि इमिगाये । कृष्ण रूप जिमि उन ठहराये ॥
अषिल आतमा है जग जेती । कृष्ण आतमा सव महँ तेती ॥
जगहित हेतु धरयौ नर रूपा । आनद कंद सरूप अनूपा ॥
नर सम लीला करत निरंतर । दया परायन अहै स्वतंतर ॥
जन सुष देन हेतु हिय माँही । व्रज लीला कीनी वहुधा ही ॥
एहि विधि कृष्ण रूप सिद्धांतू । कियेउ कंजसुत जग विख्यातू ॥
दोहा–तहाँ जु लीला उभय विधि कीनी कृष्ण कृपाल ।
यादवेंद्र गोइंद्र ह्वै निज जन कियो निहाल ॥२४
सोरठा–श्री भागवत पुराण द्वादश जो असकंध वर ।
सूत वचन परमाण वरणत लीला उभय विधि ॥२५
चौ० कृष्ण सखा हे कृष्ण कृपाला । वृष्णि वंश सत्र कियेउ निहाला ॥
अवनि दोह कृत जे नृप कोई । तासु वंश तृण पावक होई ॥
जारेउ सव जे अघमय प्रानी । विश्वविजय वल को सक जाँनी ॥
हे गोविंद गोप सुषदानी । व्रज वनिता जे भृत्य सयानी ॥
तिन कृत गान प्रेम मय वाँनी । सुनत श्रवण कर वहु अघ हानी॥

मंगल श्रवण गान गुण जासू। रचहु नाथ भृत्य जन आसू॥
निज अभिष्ट रूप चतुरानन। कहत फेरि तेहि अति सुप भाजन॥
चिंतामनि मय भूमि सुहावन। तहा सदन एक सुभ अति पावन॥
कल्प वृच्छ तहँ ललित ललामा। है गोविंद परे तेहि ठामा॥
लच्छ लच्छ सुरभि चहुवोरा। पालत है तेहि नंदकिसोरा॥
रमा सहस्र सतनि संयोगा। सेव्य मान तिन करि न वियोगा॥
आदि पुरुष गोविंद गोसाईं। तव पद कंज भजौ मन लाई॥

दोहा—दशम माझ ऐसेहि वचन कही कामधुक जानु।
तुम मम इंद्र कृपाल प्रभु श्रुति पुनि इमि किय गानु॥२६

चौ०-सुरभी किय अभिषेक बनाई। धरेउ गोविंद नाम सुष पाई॥
सुर नर मुनि सव कहु सुषदानी। धेनु अहै आश्रय जग जाँनी॥
लहि गवेंद्र पद कृष्ण कृपाला। सकल इंद्र पद लहे विसाला॥
नहि कोउ न्यून जानि यहु भाँई। धेनु सूक्ति मह कह्यौ वनाई॥
जज्ञ प्रवृत धेनु ते होई। देव वृद्धि तेहि ते लहँ जोई॥
वेद प्रवृत्ति धेनु तें वीरा। सहित षडंग पद क्रम धीरा॥
यह प्राकृत गो के गुण गाये। सव जग कहुँ आश्रय एहि भाए॥
जो उत्तम गोलोक वषाँना। तहँ ते चलि आई जग जाँना॥
ता सुरभी की महिमा जेती। को कहि सकै सुमति नहि तेती॥
तिन गवेंद्र पद दीन विचारी। कृष्ण देव गुण रूप निहारी॥
सोइ तापिनी माझ वषाना। अहै नाम गोविंद प्रधाना॥
सो सव कंज सुअन मुष वाँनी। कहिवत इत सव हे सुखदानी॥

छंद—कहियत सवै इत सत्य जाँनहु व्रह्म वानी इमि कही।
सत चित अनंद गोविंद विग्रह इष्ट मम जानौ सही॥
पुनि परमधन गोपालमंत्र सुतंत्र सवतें है वही।
सोइ गोप रूप गवेंद्र गिरिधर वसत वृंदावन मही॥२७
तहँ कल्पतरु निरषि निज प्रभु उमग हिय आँनद भरौ।

महदादिगण संयुक्त संतत प्रेम भर विनती करौ ॥
नुति करौं फिरि फिरि वहुत विधि निज सीस पद पंजक धरौ ।
पुनि निरषि श्री गोविंद मूरति रहौ मम हिय वर वरौ ॥२८

सोरठा–पुनि एहि विधि के वैन दशम माझ श्री मुनि कह्यौ ।
सुनत होय चित चैन जे रसज्ञ एहि वस्तु के ॥२९

चौ०·भूरि भाग जौं कछु मम होई । तासु पुण्य फल द्वै है सोई ॥
तौ मम वाँछा पुरवहु नाथा । गोकुल रज लहि होउ सनाथा ॥
होउ कीट कृमि लता पतंगा । देहु जन्म मम हे श्री रंगा ॥
कंज सुअन इमि विनती कीना । नंद सुअन प्रति लषहु प्रवीना ॥
अपर नाम प्रति नहि तुम मानौ । जसुमति सुत प्रति अस्तुति जानौ ॥
वहुरि कंज सुत एहि विधि गावा । जा सुनिकै सुर मुनि सुष पावा॥
मेघ स्याम दुति जन मन हारी । दामिनि द्युति कटि वसन निहारी॥
मुसुकनि मंद मंद मन हरनी । मुरली धुनि व्रज जन-सुष करनी ॥
अहो ब्रह्म जसुमति के वारे । वंदौ निति पद कंज तिहारे ॥
पसुपांगज तव चरण नमामी । जगय ईस के ईश्वर स्वामी ॥
नाम गोविंद सुरभि जो गायो । तिन की अति ऐश्वर्ज वतायो ॥
नाना विधि गुण चरित अनेका । देषिय अधिक एक तें एका ॥

दोहा ईश्वरत्व कहि तासु की परमेश्वरता गाइ ।
तात परज सव जानियो नंद सुअन सुषदाइ ॥३०

सोरठा–पुनि गुण सागर जाँनि कहियत है गोविंद गुण ।
गौतम ऋही वषानि तासु हेतु लषि कहत कछु ॥३१

चौ०-गोपी प्रकृति लषहु सख्याता । जन जो शब्द सुनहु हे ताता ॥
तत्व समूह अहै सोइ जानू । उभय शब्द जो करयौ वषानू ॥
कारण अरु कारज जग जेतो । उभय शब्द के आश्रय तेतो ॥
अति अनंद घन परम प्रकाशू । वल्लव शब्द सकल सुषरासू ॥
अथवा गोपी प्रकृति विचारू । जनत हंस मंडल सुष सारू ॥
उभय शब्द कहु वल्लव जोई । कृष्ण देव हिय आनहु सोई ॥

कारण कारज जो श्रुति गावा । तासु ईस जसु सुश्रन वतावा ॥
जन्म अनेक सिद्ध भगवंता । व्रज गोपिन के सोइ भये कंता ॥
नंद नंदन जो नाम वषाँना । तासु अर्थ इमि लषहु सुजाना ॥
जो त्रिलोक जन आँनंद दाता । नंद सुअन है सब जग त्राता ॥
जन्म अनेक सिद्ध हरि रूपा । पीछे अवही निकट निरूपा ॥
तासु अर्थं तुम ऐसे जाँनहु । कृष्ण कृष्ण प्रति कही सुमाँनहु ॥
मम तव जन्म अमित हे वीरा । मैं जानौ तेहि सुधि नहि धीरा ॥
ताकर तात परज इमि जानौ । जन्म अनादि कृष्ण कर मानौ ॥

दोहा—कही जो पीछे विविध विधि वेद तंत्र मत जांनि ॥
नंद सुअन परब्रह्म लषि अपर न अभिमत मांनि ॥३०॥

सोरठा—तहाँ कहत कोउ वैन गर्ग वचन कहँ मुख्य करिं ।
सुनिय नंद सुष अैंन तव सुत महिमा अमित लषु ॥३२॥

चौ०-कवहुक तव सुत देवकि जायो । नाम देवकी नंदन पायो ॥
कही वचन तुम सत्य प्रमानू । तहाँ सुनहु कछु कारण आनू ॥
आनक दुंदुभि मन आवेसू । भए प्रवेश न गर्भ प्रवेशू ॥
तिमि प्रवेश नंद मन जानू । शुक मुनिंद्र के वचन प्रमानू ॥
महा मनस्वी नंद सुजानू । दियेउ विशेषण हिय हुलसानू ॥
सुअन माँहि अतिसै मन लीना । महा मनस्वी हरि रस भीना ॥
भगवत भक्ति अकिंचन जासू । महामना पद नंद प्रकासू ॥
मुख्य मनस्वी अपर न कोई । नंद छूटि कै सो किन होई ॥
अति उदार आदिक गुण जेते । अंतर भूत नंद महँ तेते ॥
अैसेहि जसुमति गुण गण भारे । वचन परीछित भूप उचारे ॥
हे ब्रह्मन इन का तप कीना । नंद जसोदहि अति सुष दीना ॥
प्रादुर्भाव कृष्ण जेहि काला । भये देवकी सदन कृपाला ॥

दोहा—ताहि छन तेहि काल महँ गये जसोमति गेह ।
प्रगटें ते नहि पुत्र सुष जानहु केवल नेह ॥३४॥

सोरठा–जौ कोउ कहँ इमि वैन धरयौ देव की उदरि हरि ।
तिमि आये एहि अैन नंद घरनि बालक लष्यौ ॥३५॥
चौ०-जिमि वसुदेव देवकी गेहू । प्रगटे कृष्ण न कछु संदेहू ॥
तैसेहि नंद जसोमति धामू । प्रगटे कृष्ण सुषद अभिरामू ॥
फल करि फल कारण जग जानै । न्याय घटित घटना अनुमानै ॥
पुनि श्री गीता वचन प्रमाना । कही जु निज मुष कृष्ण सुजाना ॥
जे कोउ मोहि भजै जेहि रीती । भजै ताहि तेहि विधि यह रीती ॥
प्रगटे तहँ विशेष इमि मानै । अपर विशेषण उर महँ आनै ॥
तौ सव ठौर प्रगट इमि जानौ । नंद सुअन विनु अपर न मानौ ॥
नारद पूरव जन्म विचारू । प्रगटे तहं अखिलेस उदारू ॥
प्रगटे तहँ तहँ निज रुचि मानी । ध्रुव प्रहलाद आदि जन जानी ॥
जौ कोउ इमि मानै अनुमाना । आनक दुंदुभि मन शुभ थाना ॥
तहाँ सुनौ मम वचन प्रमानू । निज हिय करि विचार सुप मानू ॥
पिता पुत्र को भाव अनूपा । केवल प्रेम अहै सुष रूपा ॥
दोहा–चतुरानन ते प्रगट प्रगट जग कोउ रूप भगवंत ।
भगवंत पिता पुत्र की भाव प्रगट कियो श्री कंत ॥३६
सोरठा–तिमि नरहरि प्रभु रूप षंभ माझ प्रगटे तुरित ।
कोपितु भयेउ अनूप अपर सुनौ हरि रूप गुण ॥३७
चौ०-उदर प्रवेश पुत्र जौ मानहु । तहाँ सुनहु हिय सत्य सुजानहु ॥
नृपति परीछित रछन हेतू । तासु मात हिय कृपा निकेतू ॥
प्रविशे तासु उदर जदुनाथा । प्राण राषि तेहि कियेउ सनाथा ॥
तौ कहु पुत्र भाव ह्वै गयऊ । तैसेहि उदर देवकी लहेऊ ॥
एहि तें वतसलता जो भाऊ । पुत्र नेह तजि अपर न काहू ॥
महाप्रेम सुत मैं अतिभारी । नंद माँहि सो सवनि निहारी ॥
जसुमति हिय जो प्रेम प्रवाहू । अस सुष अपर लष्यों नहि काहू ॥
श्री वसुदेव देवकी रानी । भा अैश्वर्य ज्ञान सुष षाँनी ॥

ताहि ज्ञान करि दंपति भूले। पुत्र भाव तिनके प्रतिकूले ॥
एहि तें गर्ग वचन सब साचे। सुनि मम हिय अतिसै सुप माचे ॥
नन्द सुअन परब्रह्म तिहारो। गर्ग वचन सुनि हिय सुप भारो ॥
श्री दशाच्छरी मंत्र अनूपा। सोऊ तनमय लषिय सरूपा ॥
दोहा--एहि विधि किएउ विचार इत कृष्ण नाम सुषकंद।
जौ कछु रह संदेह उर सो जानहु मति मंद ॥३८
चौ०-भगवत जन हिय तोषणहारी। सुभग ग्रंथ लखि हृदय विचारी ॥
निश्चय मन करि वारहि वारा। सुनै गुणै तेहि लह सुप भारा ॥
अब कछु अपर कहत हैं आगे। कंजसुअन हरि रस अनुरागे ॥
जे जन जसमति सुत अनुरागी। कोह मोह गत परम विरागी ॥
कृष्ण रूप संतत हिय जासू। तिनकहु तनमयता हिय आसू ॥
तनमय होन हेतु सुभ ठाँमा। साधक नित्य धाम परधामा ॥
सो प्रतिपादन करत विचारी। कंज सुअन संतन हितकारी ॥
दोहा–श्री वृंदावन जे वसहि दनुज मनुज सुर कोइ।
सो पवित्र पावन सदा मानुप गणहु न साइ ॥१
सोरठा–कृष्ण रूप की चाह तौ वृंदावन वसहु नितु।
हिय अतिसै उत्साह श्री गोकुल वरनन करत ॥२
चौ०-सहस पत्र जेहि कमल अनूपा। चिंतामणि मय तासु सरूपा ॥
तासु कर्णिका पर कृत वासू। नंद सुवण वास कियेउ विलासू ॥
कृष्णदेव को सुंदर धामू। सर्वोपरि उत्कृष्ट सुठामू ॥
है वैकुंठ महत पद सोई। सो तौ वहु प्रकार कहँ कोई ॥
सो तौ तुम गोकुल कहँ जानू। अपर न इत वैकुंठ वषाँनू ॥
श्री गोकुल सम अपर न कोई। गो गण गोप वास जह होई ॥
जहँ वसि कृष्ण देव सुपदायक। गोकुलेस भा नाम सुभायक ॥
नित्यधाम है सो सुखरासी। परिकर सह जँह कृष्ण निवासी ॥
नंद जसोमति सहित निवासू। अहै जोग्य सब काल विलासू ॥

श्री वलदेव जोति कर भागू। तासु रूप प्रगटित वड भागू॥
अथवा श्री वलदेव निवासू। तहँ संतत सव सुभग विलासू॥
अथवा जे वल जू कौ अंसा। तासों भा प्रकाश अवतंसा॥

दोहा—अव कछु वरणत अमित विधि कंज सुमन सुष मॉनि।
सकल मंत्रगण शेव जेहि मंत्र राज सोइ जाँनि॥१

सोरठा—मंत्रराज को आहि सुनहु ताहि वरणन करौ।
वाहि गहौ चित चाहि मंत्रराज सवकौ सुषद॥२

चौ०-अष्टादश अक्षर परमाना। मंत्रराज तेहि नाम वषाना॥
तासु पीठ है वहुत प्रकारा। मुख्य पीठ यह वेद उचारा॥
सो वरणत है अव एहि ठाऊ। चतुरानन चित अतिसै चाऊ॥

श्लोक—कर्णिकारं महद्यन्त्रं षट्कोणं वज्रकीलकम्।
षडङ्गषट्पदीस्थानं प्रकृत्या पुरुषेण च॥३
प्रेमानन्द-महानन्द-रसेनावस्थितं हि तत्।
ज्योतीरूपेण मनुना कामबीजेन संगतम्॥४
तत्किञ्जल्कं तदंशानां तत्पत्राणि श्रियामपि॥५

महत जंत्र जो शब्द वषाना। सो जानहु तुम प्रकृति सुजाँना॥
है षटकोनाभ्यांतर माँही। कलिक वज्रकर्णिका ताही॥
वीज रूप हीरक अरु कीलक। मंत्र वकार सहित उपलक्षक॥
कहे अंग षटपदी विचारू। अक्षर पंद्रह जोनि सुसारू॥
तासु अहै अस्थान सुभावक। जाँनै सो सव जग सुषदायक॥
प्रकृति मंत्र को रूप सुजाना। स्वयं कृष्ण कोउ अपर न आना॥
कारण रूप कृष्ण सव ठामा। जग संभव कर्ता सुषधामा॥
कारण प्रकृति पुरुष कर जोई। अधिष्टातृ औ सुर भा सोई॥
अहै अधिष्टित उभय मझारी। मंत्र माहि सोभा त्रिधि चारी॥
कारण रूप मंत्र के माही। अधिष्टातृ मैं सुर लषु वाही॥
वर्ण माझ समुदाय रूप हरि। पुनि आराध्य रूप सोइ वक अरि॥

सोरठा–कारण रूप वषाँनि अधिष्टातृ सुर रूप कहि ।
पूरव कह्यो सुजाँनि हरि है सव आराध्य लपु ॥१

चौ०-वर्ण रूप कहियत अव आगे । सुनहु चित्त दै हिय अनुरागे ॥
हय सीरस जो है सुभ ग्रंथा । पंचरात्रि के जे सुभ पंथा ॥
वाचक वाच्य देवता मंत्रू । लषहु अभेद चारिं एक तंत्रू ॥
कही गोपाल तापिनी माँही । अरु पुनि श्रुति मत ऐसहि आही ॥
जैसे पवन एक वर रूपा । सब घट प्रविस्यौ भएउ अनूपा ॥
पंच रूप ह्वै जग सुष दीना । कहै देव जे चतुर प्रवीना ॥
तिमि श्री कृष्ण एक जगनायक । भए कृष्ण हित अमित सुभायक ॥
तिमि इत शब्द माँहि सुष रूपा । भये पंच पद रूप अनूपा ॥
कोडक रिषि निज मत इमि गायो । अधिष्टात्रि दुर्गाहि वतायो ॥
शक्तिमान अरु शक्ति विवेकू । मानत ह्वै कहु एहि विधि एकू ॥
कह्यौ गौतमी कल्प मझारा । उभय येक लपु सुभग विचारा ॥
कृष्ण अहै सोइ दुर्गा जानू । दुर्गा सोइ श्रीकृष्ण प्रमानू ॥

दोहा-तहां सुनौ हे रसिकजन इत अति कठिन विचार ।
सो गुर सेवा आदि वहु साधन विविध प्रकार ॥

सोरठा–जव जिन कीनी होइ साधन जन्म अनेक के ।
लह निरुक्ति तव सोई तोष पाइ संसय मिटै ॥२

चौ०-नारद पंचरात्रि के माही । विद्या श्रुति संवाद जहाँही ॥
कृष्ण देवकी वल्लभ वाला । सोई दुरगा नाम रसाला ॥
माया अंस न दुर्गा जानू । एक रूप कृष्णमय मानू ॥
परतें परम शक्ति जे कोई । महाविष्णु रूपिनी सोई ॥
जेहि रंचक जाने ते प्राणी । लहँ परमातम सव सुषषाँनी ॥
अपर भाँति नहि लह सक ताही । चाहत सुर मुनि संतत जाही ॥
तासु अहै सर्वस यह जानू । गोकुलेश्वरी नाम प्रधानू ॥
आदि देव अषिलेस गोसाईं । इनकी कृपा सहज मिलि जाईं ॥

भक्ति भजन संपति भरिपूरी। प्रिय कहु संतत प्रिय गुण भूरी ॥
आत्म प्रकृति जाँनिवो भारी। कष्ट कष्ट करि लषै विचारी ॥
दोहा–जो अषंड रस वल्लभा तासु दूरगौं नाम।
वरने जेहि लत बुद्धि वर कृष्ण प्रेम की धाम ॥४
सोरठा–श्री राधा जेहि नाम तासु शक्ति लवलेश ते।
भई शक्ति वहुनाम महतमाया अखिलेश्वरी ॥५
चौ०-ताकरि मोहित सब जग भएऊ। बचे देह अहमिलि जेहि गएऊ ॥
प्रेम रूप आनंद सुभायक। महानंद सयुत सुषदायक ॥
स्वतः प्रकाश रूप करि आपू। मंत्र रूप अति तेज प्रतापू ॥
तहां अवस्थित हरि सव ठामा। काम वीज जुत तेहि सुषधामा ॥
काम वीज मंत्र गत आहो। भिन्न कह्यो तद्यपि इत वाही ॥
काहू ठौर स्वतंत्र प्रकासू। काम वीज किय उभय निवासू ॥
कह्यो धाम एहि रीति वषानी। अत्र आवरण कहत सुषमानी ॥
कहे कर्णिका धाम सुषारी। ताकी सिषरावलित निहारी ॥
तासु अंस कर अंस अनेका। परम प्रेम भागी सुविवेका ॥
प्रभु सजाति जन तहाँ विवासु। गोकुलाख्य सब लोक प्रकासु ॥
है सजाति जन प्रिय अति ताही। सो मुनिंद्र वरने चित चाही ॥
हति वृषभासुर अतिवल भारी। अस्तुति कर सजाति नर नारी ॥
दोहा–एहि विधि पैठे परिक निज गोपिन द्रिग सुषदानि।
पुनि ऐसेहि श्री दशम मै कही कृष्ण सुष मानि ॥६
सोरठा–सुहृदन सुष विस्तारि ऐहौं देषन जाति गण।
कह्यो जु कंज पुकारि तासु पत्र पर श्री कह्यो ॥७
चौ०–गोपिन मध्य प्रेयसी राधा। सोइ श्री दैवी हर जग बाधा ॥
राधा आदि सकल जे गोपी। तासु अहै उपवन सुष लोपी ॥
ललित धाम गोपिन कौ वासू। कहि न सकै उपमा कवि तासू ॥
गोपि रूप तादृश यह मंत्रू। सकल दानि अरु अहै स्वतंत्रू ॥

देवी कृष्ण मई श्री राधा। नाम लेत छूटै भव बाधा॥
सकल सिंधुजामय सुषरूपा। सकल कांतिमय रूप अनूपा॥
सतमोहिनि परदैवत देवी। विधि तैं आदि कंज पद सेवी॥
इष्ट देव राधा हरि केरी। राधा इष्ट कृष्ण हिय हेरी॥
मीन पुराण माफ इमि भाषा। राधा कृष्ण एक सम राषा॥
जो विशेष जिज्ञासा चहहू। तौ कृष्णार्चन दीपिका गहहू॥
ऊचे पत्र अग्र जे भागा। तहाँ निवासु सुनहु बड़ भागा॥
तासु संधि के मारग आगे। गोप परिक जानहु वडभागे॥
कमल अखंड कहा जो गाई। सो गोकुल जानहु सुषदाई॥
अपर कौउक मुनि वचन उचारी। धेनु वास तहँ कहेउ सुषारी॥
तिन कछु अर्थ न समझा नीके। कही बात निज भावत जी के॥
सह गोवृंद वास पद देषी। मन भ्रम भयो न सुधि करि पेषी॥

दोहा—गो कहियै गोपाल कौ गो संख्य को नाम।
गो कहियै सुर धेनु को अरु अभीर की वाम॥८

सोरठा—एहि ते चतुर सुजानु कमल पत्र के अग्र जे।
तासु संधि विच मानु अहै गोष्ट सुंदर सुषद॥६

चौ०-पीछे गोकुल नाम वषाना। सो सब काल सुषद जगजाना॥
तंह वृंदावन सहज सुहावन। कृष्ण केलि भू पावन पावन।
कमल कर्णिका कृष्ण निवासू। स्वयं जोति अरु स्वयं प्रकासू॥
अब गोकुल को सुनु आवरनू। जाहिं सुने सुष अंतह करनू॥

चतुरस्त्रं तत्परितः श्वेतद्वीपाख्यमद्भुतम्।
चतुरस्त्रं चतुमूर्तेश्चतुर्धाम चतुष्कृतम्॥६॥

दोहा—अब गोकुल आवरण कहँ कहत कंज सुत फूलि।
कहत चारि इस लोक करि सुनत मिटै जग सूलि॥१

चौ०-श्री गोकुल बाहर चहु वोरा। श्वेत दीप सुंदर नहि थोरा॥
एहि लक्षण जुत गोकुल जानू। अषिल लोक को है सुषदानू॥

जद्यपि गोकुल मैं सतभाये । श्वेत द्वीप है सुनि इमि गाये ॥
भूमि अवांतर मय है सोई । एहि विधि जानै तव सुष होई ॥
उज्जल नाम दीप जो न्यारो । तेहि ते यह गरिष्ठ अति भारो ॥
गोकुल मंडल अंतर माँही । श्री वृंदावन सुषद सुहाही ॥
इमिविरंचि के आग मम हिया । कही भलीविधि लपि सुषलहिया॥
तहँ वसि जे उत्तम कोउ प्राणी । तेउ एहि वन कहँ ध्यावहु ज्ञानी ॥
एहि ते गोकुल के चहु पासा । अहै सु उज्जल दीप प्रकासा ॥
तेहि के मध्य अहै सुषदानी । श्री वृंदावन जग अघ हानी ॥
नाना तरु कुसुमित वहु भाँती । बोलै विहग सुभग बहु जाँती ॥
तेहि वन कौ सुमिरै दिनराती । वसहि अपर जे दीप सुहाँती ॥

दोहा—वामन वृहत पुराण जो ता महँ श्रुति के वैन ।
श्रीपति सो विनती करी सुनत होइ चित चैन ॥२

चौ०-जो पूरव ज्ञाता सुनि कोई । कहै अनंद रूप घन जोई ॥
जो वर मोहि देहु जदुनाथा । तौ मोहि वेग देषावहु नाथा ॥
सुनत मात्र तव श्री भगवंता । ताहि देषायौ सोइ सुषवंता ॥
जो निज लोक प्रकृति के पारू । है अनंदमय सव सुष सारू ॥
अक्षर अव्यय रूप अनूपा । जहँ वृंदावन वन सुषरूपा ॥
नाना विधि सुर द्रुम रितु रूरी । अति सुंदर निकुंज गुणभूरी ॥
चारिहु दिसि मूरति जो चारो । कह्यो वरणत अति सुषकारी ॥
वासुदेव आदिक जे व्यूहा । लीला तिन कृत भाँति समूहा ॥
कहे व्यूह जे नाम वषानी । तासु अंस तुम चौथे जाँनी ॥
तिन कृत चारि रूप चहु ठामाँ । अति उत्तम अनूप सुमधामा ॥
सुरलीला यह वेद प्रमानू । गोकुल ऊपर चहु दिस जानू ॥
व्योम जान ठाडे चहुवोरा । जानहि जिनकहु प्रेम न थोरा ॥

दोहा—हेतु तासु अैसे सुनौ सकल सुरन सुखदानि ।
अर्थादिक जस जाहिकौ देत ताहि तस जानि ॥३

सोरठा–जो मनु रूप वषानु शब्द मूल महँ विधि कही ।
सो इंद्रादिक जानु चारि वेद युत नित्यप्रति ॥४
चौ०-सवमिलि कृष्णस्तुति तँह करही । अति विस्मय निज उर महँधरही॥
औसेहि दशम माझ पुनि गाये । विमलादिक सव शक्ति सुभाये ॥
सव मिलि वरण्यो लोक अनूपा । जो गोलोक अनूपम रूपा ॥
सो गोकुल जानहु मन वानी । शुक मुनिंद्र वरणी रस पाँनी ॥
दशम माझ निरषौ सुष दानी । मन सुष लहै होइ रुज हाँनी ॥
महा उदय सव लोकप केरी । लष्यो नंद जो कवहु न हेरी ॥
सव मिलि करहि कृष्ण पद सेवा । नुति वहु करै अमित करि भेवा ॥
मन विस्मय सव ज्ञाति वलाई । तिन प्रति कही नंद सुषपाई ॥
सुनि सव गोप महा हरषाँने । कृष्ण देव कहु ईश्वर माने ॥
आपुस मह वोले एहि रीती । अहै परसपर अतिसै प्रीती ॥
कृष्ण अधिश्वर निश्चै जानू । मन वांछा दायक सुषदानू ॥
अति दुर्गय धाम निज हमही । कवहुक दरसै है सुष लहही ॥
दोहा–एहि विधि इन संकल्प मन जवहि कियो सत भाग्र ।
जानि गये हरि ताहि छिन अषिलेश्वर सुख पाय ॥५
सोरठा–कृपा सिंधु भगवान तिन की ईछा होन हित ।
निज हिय किय अनुमान चिंतन लागे मनहि मन ॥६
चौ०-व्रजवासी मम सजन सुषारी । जटित अविद्या कर्म दुषारी ॥
काम अनेक भांति सुषदाई । ता कृत ऊच नीच गति जाई ॥
भूले भ्रमत न निज गति जाँनहि । निर्विशेष मो कहँ ये मानहि ॥
मम लौकिक लीला वेवहारू । तासु विशेष ज्ञान सुष सारू ॥
ज्ञान अंस इन कर छपि रहऊ । नहि विशेष ज्ञान इन लहेऊ ॥
एहि विधि हिय विचार भगवंता । कारुनीक विभु जन सुष वंता ॥
ह्वै प्रसन्न गोपन कह तव ही । दरसायो निज लोक सुवसही ॥
प्रकृति पार गोलोक सुषाकर । गोपन लष्यो प्रभा सुष सागर ॥

नंदादिक जे गोप उदारा। कृष्ण कथा सुदभार अपारा॥
लीला कहत सुनत दिनराती। काल वितीत होत एहि भाती॥
भव वेदन तिन कहु नहि व्यापी। नाम लेत तरिगे वहु पापी॥
तौ गोपन की केतिक वाता। दरसायो निज लोक सुहाता॥
छंद–निज लोक तेहि दरसाय छिन महँ परम अद्भुत सोहनो।
जो सत्य ज्ञानमनंत ब्रष्णरु ज्योति सव जग मोहनो॥
जे होहि मुनिगण रहित कोउक लषहि ते वहि लोकको।
सो सहज गोपन लष्यौ चित दै भाग्य तिनकी कहे को॥७
दोहा–तहँ पूछै जौ कोउक इमि कहहु किमि देष्यो लोक।
ब्रह्मादिक कहु कठिन अति सुरभि नाम शुभ ओक॥८
सोरठा–हरि स्वरूप वल ताहि संतत व्यक्त जु है सदा।
श्रुति इमि कहँ नित जाहि सत चित आनंद रूप यह॥९
चौ०-ऐसो रूप देषि सुष माने। सो सुष किमि वाणी कहि जाने॥
जौ कोउ संका इमि मन आनै। कहाँ लष्यौ उन हम किमि जानै॥
श्री वृंदावन मैं केहि ठामू। लोक दिपायो सन सुषधामू॥
श्री अक्रूर घाट है जहवाँ। कृष्णदेव आन्यो तेहि तहँवा॥
तिन तहँ मज्जन कीन सुभायक। देषि लोक अतिसै सुषदायक॥
काढ़ि तहाँ ते तिनहि तुरंता। तिनहि तहाँ धरि दिय भगवंता॥
एहि विधि तेहि देषाय गोलोका। निश्चै हिय राषहु तजि सोका॥
तहँ कोउ अपर वोलु एहि रीती। ब्रह्म शब्द वैकुंठ प्रतीती॥
सत्यलोक अव ऊपर आही। ताहि परे वैकुंठ सुहाही॥
ताहि कहत ऐसे नहि होई। कहै सत्य हम जानहु सोई॥
स्वं लोकं इमि कही जु वाँनी। सो कवहू नहि मिथ्या जानी॥
जो वैकुंठ ताहि करि न्यारो। इत गोलोक मुख्य निरधारो॥
दोहा–परिपाटी एहि ठौर की जानहु चतुर प्रवीन।
सुरभी लोक देषाइ तहँ पुनि तेहि तहँ धरि दीन॥१०

सोरठा—पुनि आगे एहि भाय कहत कंज सुत ताहिकौ।
कही जो पीछे गाय महिमा सुरभी लोक की॥
श्लोक— चतुर्भिः पुरुषार्थैश्च चतुर्भिर्हेतुभिर्वृतम्।
शूलैर्दशभिरानद्धं मूर्धाधोदिग्विदिक्ष्वपि ॥७॥
श्लोक— अष्टभिर्निधिभिर्जुष्टमष्टभिः सिद्धिभिस्तथा।
मनुरूपैश्च दशभिर्दिक्पालैः परितो वृतम् ॥८॥
चौ०—सोइश्री दशम मांझ एहि रीती। कहत शक्र हरिसौं युत प्रीती॥
स्वर्ग उपर विधि लोक सुठामा। तहाँ ब्रह्म रिषि गण कौ धामा॥
तहाँ इंदु गति अहै सुजाना। अपर पुरुष जे तेज निधाना॥
अपर महत जे पुरुष सुजानू। तासु गम्य विधि लोक प्रमानू॥
अरु सुनु विधि को लोक जहाँलो। पालहि साध्य गणापि तहाँलो॥
याते कृष्ण देव है स्वामी। तुम सब पर है अंतर जामी॥
महाकास के परे परे जो। गति ताकी जो तपमय वर जो॥
विधि कहु हम पूछी बहु बारा। कही तिनहु हम लषै न पारा॥
सो तव लोक अपर को जानै। देहु जानाय सोई पै जानै॥
शमदम बहुत होउ जे केरो। सुकृत कर्म जिन कियो घनेरो॥
तिन कह स्वर्ग होइ हम जाना। अपर सुनिय जे वेद प्रमाना॥
ब्रह्मयुक्त जे तपमय प्राणी। ब्रह्म लोक तिनकी गति जानी॥
अति दुरगम गोलोक सुहावन। पावन हू तें पावन पावन॥
पीडित जन बरषा कृत देषी। तिन पर तुम किय कृपा विशेषी॥
तिनहि देषाइ लोक सुष दीनो। अपनो जानि कृति सब कीनो॥
दोहा—ब्रह्म लोक बरनन कियो पीछे जाहि बनाइ।
तहाँ दुहुँ गति जो कही सो सुनियै चित लाइ॥१२
सोरठा—इंदु आदि जे जोति तहाँ गम्य तिनकी नहीं।
स्वयं प्रकासक जोति सुरभि लोक की जानियै॥१३
चौ०—इंदु आदि जे जोति कहावैं। ते ध्रुव ते सब अधगति धावैं॥

पालहि साध्य ताहि इमि गायो। सो तौ नहिं इत लहै वनायो॥
देव जोनि जहँ लौ जे कोई। पालि न सकै गेह निज सोई॥
एहि तें गम्य न है काहू की। देव जोनि तप कृत काहू की॥
भगवत वपु गोलोक उभय वर। है अचिंत शक्ति सुषमा धर॥
अरु विसुत्व गुण अहैं घनेरे। अपर न है अस सम्यक हेरे॥
सवके परे लोक वह भारी। तहाँ कृष्ण कहँ सुपद निहारी॥
अैसेहि मोक्ष धर्म के माहीं। नारायण आख्यान जहाँही॥
श्री भगवत वानी सुषदानी। आपु कह्यो निज लोक वषानी॥
वहुविधि मैं विचरौ क्षिति माँही। ब्रह्म लोक मै सदा वसाही॥
सो गोलोक नाम तै जानू। ब्रह्म सनातन ताकहँ मानू॥
हे अर्जुन तो सों मै कहेऊ। गोप्य वात को अपर न लहेऊ॥
प्राकृत लोक जहाँ लौ कोई। तेहि ते भिन्न लोक वह सोई॥
गोपन कौ गोलोक देषाई। पुनि तिनकौ निज गेह पठाई॥
अपर कहत कछु पुनि विधि आपू। श्री गोलोक केर परतापू॥

दोहा–स्वर्ग लोक आरम्भ ते लोक पंच कहै वेद।
ताके ऊपर जाँनियो ब्रह्म लोक तजि षेद॥१४

सोरठा–ब्रह्म शब्द इत जानु है ब्रह्मात्मक लोक वह।
निश्चै करि सोइ मानु सत चित आनंद रूप सोइ॥१५

चौ०-सवके ऊपर लोक सुषारी। ब्रह्म सनातन रूप कह्यो री॥
सदा नित्य वैकुंठ सुभाकर। प्राकृत रचना परे प्रभा धर॥
वेद मूर्त्ति धरि हिय सुषमानी। नुति निति करहि षेद करि हाँनी॥
नारदादि ऋषि गण सुषदायक। श्रीगरुड़ादिक जे जन नायक॥
विस्वक सेन आदि वहुतेरे। वसहि निरंतर जे प्रभु चेरे॥
नित्य निवासी जे तह केरे। तासु नाम इमि कही निवेरे॥
अव जे तहा जाइवे जोगू। तिनके लक्षण गुण सयोगू॥
श्री भागवत वचन कर ताही। वरणत श्री शुक मुनि चितचाही॥

जो निज धर्म होइ रत कोऊ। धरै जन्म सत निष्ठा सोऊ ॥
सो विरंचि पुर लह व्रत धारी। तहँ पुनि तासु पुन्य कछु भारी ॥
तौ कोउ लहँ हरि लोक सुषारी। संभव मिटै लहै सुख भारी ॥
मुख्य लषहु अधिकारी सोई। लह जैवे कहु अपर न कोई।
दोहा-जोति ब्रह्म जो रूप प्रभुतासह तनमय भाव।
ते कबहुक हरि की कृपा लहै लोक सुभ ठाव ॥१६
सोरठा-औसेहु लक्षण जोग हो इन तदपि सबन कौ।
लोक लहै गत सोग हेतु सनौ अब कहत है ॥१७
चौ०-षष्ठ माहि इमि कह्यो वषानी। श्री शुकदेव गिरा सुषदानी ॥
मुक्त सिद्ध जे नर भये कोऊ। प्रभु पारायण मन वच जोऊ ॥
जे प्रसांत चित परम प्रवीना। कोटि कोटि विधि हरि रस लीना ॥
तिन मह सकृत कोपि तेहि लोका। जाइ तहाँ तव होइ विसोका ॥
मोक्ष त्याग मन निति हरि चरणा। पर सुष सुषी सोक दुष हरणा॥
सनकादिक गुण तुल्य सुभाऊ। तब तेहि मिलै लोक वर ठाऊ ॥
पुनि श्री गीता वचन प्रमानू। सुनियै सज्जन हे सुषदानू ॥
सब जोगिण मै जे वर कोई। मो मह चित्त सदा जेहि होई।
श्रद्धायुत जे भजहिं प्रवीना। ते अति उत्तम हरिरस भीना ॥
ते क्रम मुक्ति पाइ तहँ जाही। अपर न कोउ गोलोक लषाही ॥
श्री गोलोक सरिस को आही। अपर न कोउ श्री सुष कहँ जाही ॥
कहे साध्यगण जे विधि लोकू। पालहि नित प्रति सहित विवेकू ॥
दोहा-जे प्रापंचिक देवगण ते चाहै नित ताहि।
जो गोलोक बषानियो तेहि सम अपर न आहि ॥१८
सोरठा-साध्यादिक जे देव पीछे वरने वहुत विधि।
तिनै न सुधि कछु भेव कृष्ण कृपा विनु लोक को ॥१९
चौ०-श्री गोपी अरु गोप कृपालू। पालहि लोक सदा सब कालू ॥
सब के परै सर्वगत जानू। लोक अलौकिक सुषद प्रमानू ॥

दुतिय स्कंध माझ जिमि वरना । विधि कहु लोक दरस भय हरना ॥
तिमि गोपन कहँ दरसन भएऊ । श्री गोलोक महासुष लहेऊ ॥
अपर कहत कोउ एहि विधि गाई । प्रभु महान भगवंत कहाई ॥
ताहि हेतु युत कहत बुझाई । सुनहु महान अरथ सुषदाई ॥
महाकास जो नाम बषाँना । परम व्योम सोइ लषहु सुजाना ॥
ब्रह्म विशेषण जानहु सोऊ । तनमय तहाँ होइ जौ कोऊ ॥
ता पीछे वैकुंठ लहै सो । लह्यो अजामिल तिमि जानहु सो ॥
तासु परे तुम नद नंदा । जहँ गोलोक सुभग सुषकंदा ॥
श्री गोविंद रूप तेहि ठामू । क्रीडा नित्य महासुष धामू ॥
तहँ जैवे की गति सुषदानी । नहिं साधारण है इमि जानी ॥
कैसी है तहँ सुनहु विचारू । अहै तपोमय अति सुषसारू ॥
तप जो नाम कहा इत गाई । तासु अर्थ सुनियै मन लाई ॥

दोहा–तप अषंड ऐश्वर्य को नाम अहै सुषदानि ।
सहसनाम की भाष्य महँ कह्यो सु प्रगट वषानि ॥२०

सोरठा–करहि जो तप सतभाय प्रभु विष इक मन क्रम वचन ।
तप ऐश्वर्य लषाय एहि ते जानहु कठिन अति ॥२१

चौ०-एहि ते ब्रह्मादिक कहु जानू । अहै अतर्क सुवेद प्रमानू ॥
अब गोलोक नाम जे ख्याती । वीज तासु जो श्रुति विख्याती ॥
ब्रह्म लोक प्रापति कह हेतू । हरि विषइक मन साधन सेतू ॥
जीत्यो मन सब विधि करि जिनहू । प्रेम भगति उपजै जब तिनहू ॥
सो वैकुंठ जाहि चलि आसू । जे अनन्य तिन करतहँ वासू ॥
परा प्रकृति के पार सुजानू । है गोलोक सुभग वर थानू ॥
वरन्यो एहि विधि श्री गोलोका । अरु गोकुल जे सुंदर ओका ॥
उभय एक सम कहत वषानी । है अद्भुत ए दोउ सुषदानी ॥
सो श्री गोकुल परम पुनीता । तहाँ वसै व्रज जन सुभरीता ॥
स्वतँह भाव संतत जेहि केरे । व्रजवासी सब अपर न हेरे ॥

जा हित श्री गोवरधन धारयौ । गो गन ताप तुरित हरि टारयौ ॥
दुल्लभ भाव तासु करि देषी । एक हस्त गिरि धरयौ विशेषी ॥
दोहा-अैसेहि श्री सुष प्रभु कह्यो मोक्ष धर्म के माहिं ।
ब्रह्म लोक गोलोक सै मै विचरो चित्त चाहि ॥२२
सोरठा-एक समय व्रजनाथ इत आन्यो वैकुंठ कहु ।
निज जन कियो सनाथ गोकुल मै धरि दियेउ तेहि ॥२३
श्लोक-श्यामैर्गौरैश्च रक्तैश्च शुक्लैश्च पार्षदर्षभैः ।
शोभितं शक्तिभिस्ताभिरद्भुताभिः समन्ततः ॥६
चौ०-एहि विधि कहि गोलोक प्रभाऊ । पुनि वरणत हिय अतिसै चाऊ ॥
नारद पंचरात्रि के वचना । विजयाख्यान जहाँ सुभ रचना ॥
सबके उपरि कहे गोलोकू । नाम लेत जन होहि विसोकू ॥
स्वयं व्यक्त अति विसद सुभायक । परमानंदी हरि बहु लायक ॥
विहरत तहँ गोविंद निरंतर । इत गोकुल महँ सदा सुतंतर ॥
पुनि कैसो गोलोक सुषाकर । रामकृष्ण क्रीडा थलभा धर ॥
पुनि कैसो वह लोक सुहावन । वहुत श्रृंगि सुरभी अति पावन ॥
अथवा यूथ यूथ वर धेनू । श्रृंगि सुहावनि वहु सुष देनू ॥
सकल कामधुक कृष्ण कृपाला । वसहि मानि सुष तहँ सब काला ॥
इहा उहा दोउ ठाम अनूपा । नंद सुअन सब कहु सुष रूपा ॥
इत प्रसिद्ध गोलोक अहै जू । श्रुति पुराण सुनि कृष्ण कहै जू ॥
वहु विधि गान करै श्रुति जासू । स्वयं कृष्ण अषिलेस प्रकासू ॥
दोहा-अहै प्रपंचातीत जो सुभग ठाम सुभ रूप ।
वहुधा अहै प्रकास जेहि सुंदर सुषद अनूप ॥२३
सोरठा-एहि विधि लोक वर्णांनि कियो सुभग सिद्धांत वर ।
वहुरि अपर जिय आनि कहत वचन सुष रूप विधि ॥२४
दोहा-जिमि विराट कौ रूप वर अंतरजामी तासु ।
रहित भेद वरन्यो निगम तिमि इत कर प्रकासु ॥२५

दोहा—पुरुष सूक्ति महँ जिमि कही उभय पुरुष एक रूप ।
तैसेहि श्री गोलोक अरु अधिष्टातृ एक रूप ॥२६

श्लोक—एवं ज्योतिर्मयो देवः सदानन्दः परात्परः ।
आत्मारामस्य तस्यापि प्रकृत्या न समागमः ॥१०

चौ०-देव सब्द गोलोकहि जानू । निगम अधिष्टातृ तहँ मानू ॥
ज्योतिरमय सो रूप प्रकासू । सर्वोपरि अति सुषद विलासू ॥
श्री गोविंद रूप तेहि जानिय । सदानंद घन ते सब मानिय ॥
अहै आतमाराम सरूपा । रहित अपेक्षा परम अनूपा ॥
माया सनमुष सक न विलोकी । तेज अपार द्रिष्टि तेहि रोकी ॥
द्वितिय माझ शुक मुनि इमि गायो । माया हरि ते दूरि बतायो ॥
जहा वसैं हरि भृत्य अनेका । सुर पूजैं जेहि सहित विवेका ॥
माया तेहि दिशि लषै न कबहू । सदा काल संतत अरु अजहू ॥
तौ हरि सनमुष किमि वह जाई । नाम लेत सकुचै छुपि जाई ॥
तासु अंस जे पुरुष अनूपा । अषिल प्रपंचक सुषद सरूपा ॥
नहि श्रीकृष्ण सरिस तेहि जानू । एहि विधि वरणत विहित प्रभानू॥

श्लोक—मायया रममाणस्य न वियोगस्तया सह ।
आत्मना रमया रेमे त्यक्तकालं सिसृक्षया ॥११
नियतिः सा रमा देवी तत्प्रिया तद्वशंवदा ॥१२

दोहा—प्राकृत प्रलय भये सवैं ता महँ जाइ समात ।
जहँ ते प्रगटे प्रथम सब तहाँ रहत यह ख्यात ॥२७

चौ०-माया रमत ईश जब कबहू । तासो होत वियोग न जबहू ॥
तौ ईश्वरता किमि करि जानिय । भई जीव समता यह मानिय ॥
ताहि कहत अैसें किमि होई । रमत जाहि विधि सुनियै सोई ॥
अंतर वृत्य रमत एहि रीती । समुझहु निज मन तजि विपरीती ॥
रमया रूप शक्ति तेहि संगा । रमत नित्य हरि तजत न संगा ॥
वाहर माया संग विनोदा । अैसे समुझि गहौ मन मोदा ॥

पुनि विधि विनय कीन येहि रीती । तव हिय होउ न पुनि विपरीती॥
सरनागत वरदानि सरूपा । रमया शक्ति सरूप अनूपा ॥
गुण अवतार जहाँ जस चाहू । सकल मूल राधा वर नाहू ॥
माया भिन्न रहै सव काला । चिन्मय शक्ति जु संग रसाला ॥
एहि विधि थिति संतत है जासू । लीला अमित गनै को तासू ॥
प्रेरण विना सृष्टि कहु कैसे । तव वानी असमंजस अैसे ॥
दोहा—ताहि कहत अैसे सुनहु सृष्टि रचन कै हेतु ।
प्रेरत काल सु तुरितहि रचै सृष्टि अरु सेतु ॥२८
सोरठा—कृष्ण प्रभाव अपार पौरुषता कहँ कहत कोउ ।
काल हेतु संसार कोउक एहि विधि मान ही ॥२९
काल वृत्ति करि ईस प्रकृति गुणमय के विषे ।
धरयो वीज जगदीस पुरुष रूप ह्वै निगम कहँ ॥३०
चौ०-रमा सु कौन कहा तुम गाई । जासु संग हरि रहत सदाई ॥
सुनहु चित्त दै हे सुषदाई । कही नाम रमया जे गाई ॥
स्वयं भगवती जाँनहु ताही । नियता पुनि जाँनहु तुम वाही ॥
है सरूप भृत शक्ति ताहि की । स्वतह प्रकाशक रूप जाहि की ॥
अनपाइनि हरि शक्ति अनूपा । तासु हेतु कहियत सुष रूपा ॥
चित सरूप हरि को जिमि जानू । तेहि सम तेहि अभेद हियमानू ॥
तेहि लषि माया रहै सुदूरी । किमि समुहाय अप्रन जेहि भूरी ॥
अनपायिनि तेहि अपर प्रकारा । विष्णु पुराण वचन अनुसारा ॥
जगत मात श्री सव गुणषाँनी । अनपाइनि हरि की सुषदानी ॥
जिमि सव गत भगवंत अनंता । तिमि इन कौ जानहु वुधि वंता ॥
अषिल ईस जिमि एहि जगमाही । जा जा विधि अवतार कराही॥
तहँ तहँ श्री सहाय सव ठामू । जगत अंव अनपाइनि नामू ॥
दोहा—देवरूप महँ देव सी नरमहँ मानुषि रूप ।
हरि सरूप अनरूप सो धारै वपुष अनूप ॥३१

तेहि विनु विष्णु न रहि सकै विष्णु विना नहि सोइ ।
एहि विधि वचन अनेक विधि श्रुति पुराण सव जोइ ॥३२

श्लोक-तल्लिङ्गं भगवान् शम्भुर्ज्योतीरूपः सनातनः ॥
या योनिः सा पराशक्तिः कामबीजं महद्धरेः ॥१३
लिङ्गयोन्यात्मिका जाता इमा माहेश्वरीः प्रजाः ॥१४

चौ०-तहाँ कहत कोउ अपर प्रकारा । जग कारण शिवशक्ति उचारा ॥
तहँ विराट वरणन को नाईं । इत हू जानहु हे सुपदाईं ॥
ईस अंग सव देव कहावै । एहि विधि श्रुति पुराण सव गावै ॥
जासु अयुत अयुतांस घनेरी । विश्व शक्ति पालन सव केरी ॥
करै पालि संहर सव काहू । सदा संग रह संतत जाहू ॥
श्री भगवंत अंसवर जोई । जो प्रपंचआत्मक प्रभु कोई ॥
तासु अंस जोति आछंनू । शंभु नाम सोइ अपर न भिंनू ॥
पय ते भई दही जग जैसे । जान शंभु भिन्न नहि अैसे ॥
ईश अंश जो पुरुष वर्षांना । तासु वीज आधान सुजाना ॥
माया नाम सकल जगजानू । तासु प्रत्यच्च रूप जनि मानू ॥
सोइ जोनि इत जाँनहु संता । तासु शक्ति की शक्ति अनंता ॥
पराप्रधान शक्ति एक तासू । सो गरिष्ट वहु रचै विलासू ॥
जौ कोउ कहँ किमि रचै अकेली । जगर जानहि अहै सुहेली ॥
ताहि कहत समुझै जेहि रीती । नहि उपजै फिरि मन विपरीती ॥

छंद-नहि होइ जिय विपरीत कवहू सुनि विचारै हिय यदा ।
हरि अंस पुरुष वर्षांनियो तेहि उपज मन रुचि यह मुदा ॥
किमि होइ जग संभव सवै तव महत भा जिय जानियो ।
सोइ महव तत्व सरूप जीवहि वीज तुम हिय मानियो ॥३३

सोरठा-सोइ प्रकृति महु वीजु काल वृत्ति करि तहँ धरयौ ।
संभव सकल कही जु उमाखन तें आदि सव ॥३४

चौ०-यावै शिव के सास्त्र अनेका । ता महँ नहि अति सुभग विवेका ॥

यातें शिव कहँ कहै स्वतंत्र । नहि कछु लपै तिनहि परतंत्र ॥
वास्तव वस्तु कृष्ण सब मूला । तेहि जाने विनु मिटै न सूला ॥
ईस अंस को अंस अनेका । पीछे वरन्यो लषहु विवेका ॥
ताहि रीति इत लषहु विचारी । जनि समुझौ विपरीति निहारी ॥
प्रगट ईस तें पुरुष वषाना । तासु सकल यह चरित निदाना ॥
ताही की जो शक्ति अनूपा । लिंगस्थानी तेज सरूपा ॥
तेहिते लिंग जोनि बहु जानू । सकल शंभु अश्चर्य प्रमानू ॥

श्लोक-शक्तिमान् पुरुषः सोऽयं लिङ्गरूपी महेश्वरः ।
तस्मिन्नाविरभूल्लिङ्गे महाविष्णुर्जगत्पतिः ॥१५
सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
सहस्रबाहुर्विश्वात्मा सहस्रांशः सहस्रसूः ॥१६
नारायणः स भगवानापस्तस्मात् सनातनात् ।
आविरासीत् कारणार्णो निधिः सङ्कर्षणात्मकः ॥
योगनिद्रां गतस्तस्मिन् सहस्रांशः स्वयं महान् ॥१७
तद्रोम विलजालेषु बीजं सङ्कर्षणस्य च ।
हैमान्यण्डानि जातानि महाभूतावृतानि तु ॥१८

चौ०-शक्ति मान जो पुरुष वषानो । ईश्वर अंश अंश तेहि जानो ॥
पीछे हम जिमि कहा वषाँनी । सोइ इत रीति जानु मनवानी ॥
तेहि को नाम महेश्वर वरणा । अपर न हिय संसय कछु धरणा ॥
सो जब भूत सूक्ष्म परजंता । व्यापी गयौ है रूप अनंता ॥

दोहा-स्वयं तदंसी तब तहाँ महाविष्णु सुष रूप ।
भयो प्रगट तेहि रूप तें आविरभाव अनूप ॥२५

सोरठा-जहलो जग विस्तार सकल जीव पति सो भयो ।
तासु रूप गुण सार आगे सो सव कहत हैं ॥२६

चौ०-सहस अंस करि जनम जाहि कौ । कहियै सहस अंस ताहि कौ ॥
करै सहस्र न आपुन सोई । सहस सब्द असंख्य प्रति होई ॥

ऐसेंहि द्वितिय माझ पुनि गाये । भूमा पुरुष अनादि बताये ।।
तिनते लीला विग्रह जानू । सहस सीरषा प्रगटेउ मानू ॥
सोइ अवतार आद्य सब कहँही । अपर सुनौ जिमि लीला गहही ॥
कारण अरन व सयन सदाही । नारायण जो नाम कहाँ ही ॥
कारण अरनव जलनिधि जानू । अरु नारायण नाम बषाँनू ॥
पीछे श्री गोलोक बषाँना । तासु आवरण पुनि किय गाना ॥
चतुर व्यूह के मध्य सुजाना । संकरषण जो नाम बषाँना ॥
तासु अंस जे जग सुषकारी । नारायण श्रुति नाम पुकारी ॥
लीला तासु सुषद सब काहू । जे अजादि मुनि जन सब ताहू ॥

दोहा–निज सरूप आनंदघन सो समाधि सुष रूप ।
श्री नारायण श्रुति कह्यो नाम सरूप अनूप ॥३७

सोरठा–तिनते अमित प्रकार भये अंड को गणि सकै ।
अपन आप सुषसार नारायण यह नाम वर ॥३८

चौ०-तिनते अमित अंड जे भाषे । तासु अर्थ ऐसे गुनि राषे ॥
जो संकर्षण आत्मक रूपा । वीज जोनि वह शक्ति अनूपा ॥
पूरवभूत सूक्ष्म परजंता । प्राप्त भये सब पर सुषवंता ॥
ताकी रोमावलि विलजाला । तहँ विभु अंतर भूत विसाला ॥
हेमअंड तव वहु विधि भएऊ । अमित प्रकार सो किमि कहि सकऊ॥
सो सब प्रापंचीकृत अंसू । महाभूत आवृत अवतंसू ॥
दशम माझ ब्रह्मा इमि गाये । तासु गान सुनियैं चितलाये ॥
हे हरि एहि सम अंड अनेका । रोम कूप तव तहँ वहु नेका ॥
तव महिमा मैं किमि करि गावौं । एक अंड कर थाह न पावौं ॥
पुनि तिसरे असकंध मझारू । श्री शुक कहेउ वचन सुषसारू ॥
सहित विकार अंड वहु जांती । निर्विशेष युत अगनित भाँती ।।
अंड कोष बाहर चहुँ ओरा । है आवरण कठिन अति घोरा ॥

दोहा—जोजन कोटि पचास वर विस्तर वेष्टित एक।
दश दश उतर आवरण यह ब्रह्माण्ड विवेक ॥३६

सोरठा—सो तव रोम मझार देखि परत परमानु सम।
अपर लषै गुण सार कोटि कोटि ब्रह्मांड वह ॥४०

चौ०-कहे जो वहु ब्रह्मांड अनूपा। भिन्न भिन्न तहँ तेहि अनुरूपा॥
प्रविसत सोइ जो अंस वषाना। तासु अंस पुनि अमित सुजाना॥
एक अंस करि सो सव ठामा। प्रविसे अंड अंड सुषधामा॥

श्लोक—प्रत्यण्डमेव मेकांशादेकांशाद्विशति स्वयम्।
सहस्रमूर्द्धा विश्वात्मा महाविष्णुः सनातनः ॥१६
वामाङ्गादसृजद्विष्णुं दक्षिणाङ्गात्प्रजापतिम्।
ज्योतिर्लिङ्गमयं शम्भुं कूर्चदेशादवासृजत् ॥२०
अहङ्कारात्मकं विश्वं तस्मादेतद् व्यजायत ॥२१

चौ०-फिरि तिन तहाँ जाइ का कीना। वरणत सोइ तुम सुनहु प्रवीना॥
वाम अंग तें विष्नु उपाये। प्रति ब्रह्मांड भिन्न सुष पाये॥
भिन्न भिन्न पालक सवठामा। विष्णु नाम जेहि सव सुषधामा॥
प्रति ब्रह्मांड विष्णु ते आदी। वसहि देव त्रय अरु मुनि वादी॥
जिन निज अंस प्रेरि एहि रीती। वसे तहाँ ते सव करि प्रीती॥
सो जिमि सकल अंड के माही। जथा जोग सो रहति न पाई॥
तैसेहि एहि ब्रह्मांड मझारा। वसै निरंतर है सुभ चारा॥
कहे प्रजापति नाम वषाँनी। कंचन गर्भ जानु मन वानी॥
नहि चतुरानन समुझौ ताही। जो आवरण माँझ गत आही॥

दोहा—तहाँ तहाँ सोइ देवता सृष्टि जाँनि यहु संत।
विष्णु शंभु तहँ तहँ उभय पालहि करहि जु अंत ॥४१

सोरठा—भृकुटि मध्य ते जानु प्रगटे शंभु कहे जु इत।
कूर्च देश सोइ मानु जलावरण अस्थान तेहि ॥४२

दोहा—अपर शंभु के काज कछु कहियत सो सुभ रीति ।
अहंकार मय विश्व यह ताहित जन्म सु प्रीति ॥४३

सोरठा-यातै विश्व सुजानि अहंकार मय प्रगट लषु ।
विश्व सकल इमि मानि अहंकार मय ताहिते ॥४४

दोहा—अहंकार जहँ लौ अहै तहँ लौ शंभु सुजानु ।
अधिपति तिन कौ ठौर सब इन बिनु अपर न मानु ॥४५

श्लोक—अथ तैस्त्रिविधैर्वेशैर्लीलामुद्वहतः किल ।
योगनिद्रा भगवती तस्य श्रीरिव सङ्गता ॥२२
सिसृक्षायां ततो नाभेस्तस्य पद्मं विनिर्ययौ ।
तन्नालं हेमनलिनं ब्रह्मणो लोकमद्भुतम् ॥२३

चौ०-प्रति ब्रह्मांड प्रवेश वषाना । तहँ तहँ लीला जह जस ठाना ॥
सो अब वरणत है करि प्रीती । सुनत सुषद मन तज विपरीती ॥
तेहि सम त्रिविध अंस जो कीना । प्रति ब्रह्मांड प्रवेश प्रवीना ॥
विष्णु आदि त्रय रूप अनूपा । पालनादि लीला सुष रूपा ॥
ब्रह्मांडांतरगत सुषरासी । पुरुष तहाँ तहँ लषु भव नासी ।
भगवति संग सदा तेहि रहई । जिमि जल साइहि रमा न तजई ॥
कही भगवती सो को आही । इमि पूछै कोउ निज हिय चाही ॥
ताहि कहत समुझाय विचारी । सुनहु भगवती नाम सुषारी ॥
पीछे योग निद्रा हम वरनी । तासु अंस प्रगटी भय हरनी ॥
सोई भगवती जग सुष करनी । स्व सरूप आनंदमय भरनी ॥
अंतरभूत अैस्वर्य अनंता । सदा संग श्री इव निज कंता ॥
उपजै जग जब यह मन आई । तबहि तासु नाभी सुभ ठाई ॥
तहते हेम जलज अति सोहन । प्रगट्यौ अति आभा मनमोहन ॥
जो वह हेम नलिन अति पावन । सो विधि कौ है लोक सुहावन॥

दोहा—जनम सयन को ठाम वर कंज सुअन को आहि ।
यातै भाष्यौ लोक करि अपर न कछु इत आहि ॥४६

सोरठा—अब समष्टि से जीव तिन कहु करण प्रबोधहित ।
जो जग करता सीव कारणार्णव सयन जेहि ॥४७

दोहा—तृतिय भागवत के विषे जग संभव जेहि रीति ।
सोइ वरणन करियत इहाँ सुनै संत करि प्रीति ॥४८

श्लोक— तत्त्वानि पूर्वरूढानि कारणानि परस्परम् ।
समवायाप्रयोगाच्च विभिन्नानि पृथक् पृथक् ॥२४
चिच्छक्त्या सज्जमानोऽथ भगवानादिपूरुषः ।
योजयन्मायया देवो योगनिद्रामकल्पयत् ॥२५
योजयित्वाथ तान्येव प्रविवेश स्वयं गुहाम् ।
गुहां प्रविष्टे तस्मिंस्तु जीवात्मा प्रतिबुध्यते ॥२६

चौ०-कारण तत्व अहै जे कोई । पूरव है अरूढ सब सोई ।
अहै परस्पर भिन्न न मिल ही । मिले विना जग हो इन कबही॥
तब श्री आदि पुरुष भगवंता । चिनमय शक्ति युक्त सुषवंता ॥
अपनी शक्ति योग बलताही । सकल मिलाइ दीन छन माही ॥
मिले परसपर तत्व निहारी । तेहि पीछे निरीह व्रतधारी ॥
गही योग निद्रा तब आपू । नारायण जेहि अमित प्रतापू ॥
मिलत तत्व आपुस मह जौलौ । गहत योगनिद्रा कहु तौलौ ॥
उभय वीच तब जग्यौ विराट्ू । जा मह सकल जगत कर ठाट्ू ॥
प्रलय काल निद्रामहँ रहेऊ । पुनि जागर्ति अवस्था लहेऊ ॥
गुहा प्रविसि हरि रूप अनूपा । जगे जीव अब अमित सरूपा ॥

श्लोक— स नित्यो नित्यसम्बन्धः प्रकृतिश्च परैव सा ॥२७
एवं सर्वात्मसम्बन्धं नाभ्यां पद्मं हरेरभूत् ।
तत्र ब्रह्माऽभवद्भूयश्चतुर्वेदी चतुर्मुखः ॥२८

चौ०-जीवस्वभाविक थीति अब कहँही । जिमि जहँ रहत फिरत इतउतही॥
अहै नित्य जो सब्द वषानां । लषहु अनादि अंत नहि जाना ॥
नित संबध कहा जो गाई । सदा ईस के निकट रहाई ॥

जिमि रवि और विकिरिनि न भिन्नू । भिन्न अहैं पुनि लषहु प्रवीनू ॥
दोहा—पराप्रकृति यह जीव मम अर्जुन तू इमि जानु ।
श्रीमुष बानी प्रभु कह्यौ अरु पुनि वेद प्रमानु ॥४६
सोरठा—पक्षीद्वै तरु एक बसहि निरंतर एक ढिग ।
एकहि ग्यान अनेक एक मुग्ध समुझै न कछु ॥५०
चौ० अब समस्टि जो जीव बषाना । अधिष्टान सोइ सुभग सुजाना ॥
गुहा नाम तहँ पुरुष प्रवेसू । तहँ ते जग संभव बहु वेसू ॥
इत समष्टि बपु को अभिमानी । कंचन गर्भ ताहि कौ जानी ॥
सुनहु फेरि संभव की रीती । सुनत छुटै मन की विपरीती ॥
श्री हरि नाभी ते वर कंजू । प्रगट्यौ जहाँ जीव गण पुंजू ॥
प्रथमहि तहँ ते भा चतुरानन । चतुरवेद हरि गुण गण जानन ॥
श्लोक– स जातो भगवच्छक्त्या तत्कालं किल चोदितः ।
सिसृक्षायां मतिं चक्रे पूर्वसंस्कारसंस्कृताम् ॥
ददर्श केवलं ध्वान्तं नान्यत् किमपि सर्व्वतः ॥२६
उवाच पुरतस्तस्मै तस्य दिव्या सरस्वती ।
कामः कृष्णाय गोविन्द ङे० गोपीजन इत्यपि ।
वल्लभाय प्रिया वह्नेर्मन्त्रस्ते दास्यति प्रियम् ॥३०
तपस्त्वं तप एतेन तव सिद्धिर्भविष्यति ।
अथ तेपे स सुचिरं प्रीणन् गोविन्दमव्ययम् ॥३१
श्वेतद्वीपपतिं कृष्णं गोलोकस्थं परात्परम् ।
प्रकृत्या गुणरूपिण्या रूपिण्या पर्युपासितम् ॥
सहस्रदलसम्पन्ने कोटिकिञ्जल्कबृंहिते ॥३२
भूमिश्चिन्तामणिस्तत्र कर्णिकारे महासने ।
समासीनं चिदानन्दं ज्योतीरूपं सनातनम् ॥३३
शब्दब्रह्ममयं वेणुं वादयन्तं मुखाम्बुजे ।
विलासिनीगणवृतं स्वैः स्वैरंशैरभिष्टुतम् ॥३४

चौ०-अत्र चतुरानन ईहा जैसी। वरणत गुणयुत मति सब तैसी ॥
भगवत शक्ति काल करि प्रेरयौं। भयो जु ब्रह्मा चहु दिसि हरयौ ॥
पूरब संस्कारयुत सोई। जग रचना कहु मति उपजोई ॥
चहुदिशि तिमिर लष्यो अतिभारी। अपर न देष्यो दिष्टि पसारी॥
सुनी व्योम वांनी रस सानी। भगवत कला गीरा सुषदानी ॥
श्री गोपाल मंत्र अति पावन। अष्टादश जेहिं नाम सुहावन ॥
यह जपु तै होइहि प्रिय तोरा। सुनिय तनो तेहि सुष नहि थोरा॥

दोहा-तप तप वानी विधि सुनी इमि गावत मुनि वेद।
तुम इत मंत्र वषानियो असमंजस सुनि षेद ॥२१

चौ०-तपयुत मंत्र जपहु मन लाये। पैहो सकल सिद्धि मन भाये ॥
तप तिन कीन वहुत सुष पाई। श्री गोविंद चरण चित लाई ॥
सो तेहि मंत्र प्रभाव सुभायक। निज मन काम लह्यो सुषदायक ॥
भई शक्ति भव संभव केरो। वरणत सव ठा भाँति घनेरी ॥
गोकुलाख्य सुभ पोठ निहारी। तहाँ जाइ निज मन अनुसारी ॥
श्री गोविंद रूप उर आनी। सो वरणत सव सोभा षानी ॥
श्वेत दीप पति कृष्ण कृपालू। श्री गोलोक वसत सव कालू ॥
कंज सहस दल अति सुष षाँनी। कोटि सुभग किंजलक सुहानी ॥
चिंतामनि मय भूमि सुहावनि। अति सोभाकर पावन पावनि ॥
कंज करनिका पर सुभ आसन। तहँ आसोन कृष्ण भवनासन ॥
चिदानंदघन जन हितकारी। जोति रूप अव्यय सुष भारी ॥
सब्द ब्रह्म मय वेंनु सुहानी। गहे कंज कन अति रुचि मानी ॥
मुष अंवुज करि ताहि वजावत। जिन जन हिय कहसुषहु लसावत॥
सतगुण आदि सहित वर रूपा। प्रकृति परी सख्याति अनूपा ॥

दोहा-श्री गोकुल वाहर षरी दूरि द्रिष्टि पथ त्यागि।
ध्यान पंथ अर्जन करै मन वानी अनुरागि ॥२२

सोरठा-माया पर भगवंत सनमुष परी न ह्वै सकै।
इमि मुनिराज भनंत माया सहसुर वलि वहत ॥५३

चौ०-अहै विलासिनि गण जे व्यूहा। निज निज परिकर सहितसमूहा॥
तेहि आवरण मांज निज ठामू। नुति निति करै वचन रसधामू॥
जौ कोउ कह इत वचन वनाई। विधि व्रत वंधन भा एहि ठाई॥
संसकार विनु किमि उपदेसा। मंत्रराज प्रभु कियेउ निदेसा॥
ता प्रति कहत सुनौ वर वानी। जिमि व्रतवंधन भ्रव कृत जाँनी॥
अति गरिष्ट हरि इच्छा जानू। नहि व्रत वंध संक उर आनू॥

श्लोक-अथ वेणुनिनादस्य त्रयीमूर्त्तिमयी गतिः।
स्फुरन्ती प्रविवेशाशु मुखाब्जानि स्वयम्भुवः ॥३५
गायत्रीं गायतस्तस्मादधिगत्य सरोजजः।
संस्कृतश्चादिगुरुणा द्विजतामगमत्ततः ॥३६

चौ०-वेनु नाद जो सुभग सुहावन। गायत्री वर वरण जु पावन॥
वेदमयी गति जद्यपि तासू। सुन्यो कृष्ण वंशी मुष आसू॥
दिव्य नाद विधि मुख वर कंजू। गह्यो जतन करि हिय वर मंजू॥
अष्ट कर्ण द्वारा हिय धारी। गायत्री को वरण विचारी॥
जगत आदि गुरु कृष्ण कृपाला। संस्कार दिय तेहि प्रतिपाला॥
पाइ त्रयी हरि ते हुलसाना। प्रभु अस्तुत करवे उर आना॥

श्लोक-त्रय्या प्रबुद्धोऽथ विधिर्विज्ञाततत्त्वसागरः।
तुष्टाव वेदसारेण स्तोत्रेणानेन केशवम् ॥३७

दोहा-वेद मात कहँ पाइ विधि जगे चित मन जासु।
विदित तत्व सागर हिये अस्तुति करत जु आसु ॥५४

सोरठा-अहं केशवं नौमि कह्यो शब्द एहि ठाम जो।
को कहि सकअ अस्तौमि केशव अमित प्रताप गुण ॥५५
जहँ तहँ अंश प्रकाश सो सब है मम केशते।
जिनके ज्ञान विकाश ते केशव मो कहँ कहैं ॥५६

श्लोक–चिन्तामणिप्रकरसद्मसु कल्पवृक्ष–
लक्षावृतेषु सुरभीरभिपालयन्तम्।
लक्ष्मीसहस्रशतसम्भ्रमसेव्यमानं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥३८

चौ०- तहँ गोलोक माँझ वहु ठामू। याही मंत्र भेद वहु धामू ॥
वृहत ध्यान मय सुभग निवासू। मंत्र एक करि जानहु तासू ॥
रसमय आदि पीठ वहु जाँती। मुख्य पीठ एक सुभग सुहाती ॥
सवके मध्य अहै वर ठामू। गोकुल नाम सकल सुष धामू ॥
ताहि निवास जोग्य जोइ लीला। सोइ वरनत नुति सँह गुण सीला॥
चिंतामणि मय सदन सुहावन। तहं सुरद्रुम एक जन मन भावन॥
लक्ष सुरभि आवृत चहु ओरा। पालि देत सुष तिनहि न थोरा ॥
वन लै जात चरावत ताही। पुनि गो गृह आनत चित चाही ॥
सत सहस्र सुंदर घृजनारी। तिन करि सेव्यमान गिरधारी ॥
आदि पुरुष गोविंद गोसाईं। भजौ ताहि मैं मन चित लाईं ॥

छंद– चित लाइ भजु गोविंद मूरति स्याम अंवुद सुभग सो।
कर क्वनित वेनु सुभाय सुंदर मंद सुरधुनि विमल सो।
अरविंद लोचन सुभग केकीपक्ष सिर सोहन महा।
लषि कोटि कोटि मनोज सोभा लहत नहि तेति तन तहां ॥

दोहा–आदि पुरुष गोविंद पद भजौ सदा चित चाहि।
तेहि व्यतिरेक न अपर मोहि आश्रय कतहू आहि ॥२७

श्लोक—वेणुं क्वणन्तमरविन्ददलायताक्षं
बर्हावतंसमसिताम्बुदसुन्दराङ्गम्।
कन्दर्पकोटिकमनीयविशेषशोभं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥३९
आलोलचन्द्रकलसद्वनमाल्यवंशी—
रत्नाङ्गदं प्रणयकेलिकलाविलासम्।

श्यामं त्रिभङ्गललितं नियतप्रकाशं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४०॥

चौ०-चिंतामणि मय सदन अनेका । तहं गत गांन नाट्य नहिं एका ॥
कहव बहुत विधिकरि बहुसोभा । जाहि सुनत सुरमुनि मन लोभा॥
तेहि अनुसार सुभग जेहि पीठू । गोकुलाख्य जेहि अज नहि दीठू ॥
तह गत लीला वरणन कीनी । नयन न देष्यौ किमि कहि दीनी ॥
वहुत भाँति करि ध्यान विशेषी । ध्यान पंथ लीला इन देषी ॥
प्रथम पीठ लीला इमि गाई । द्वितिय पोठ सुनियै मन लाई ॥
मेघ स्याम वपु सुभग त्रिभंगी । ललित मंद मुसुकनि वहुरंगी ॥
प्रणय सहित परिहास अनूपा । सुभग अंग अतिसै सुष रूपा ॥
कोटि कोटि मनसिज छवि फीकी । एक अंग पट तरहु न नीकी ॥
सुभग सुलोल चंद्रिका चारू । ता करि लसत वदन सुष सारू ॥
वन माला मुरली अति रूरी । रतन जटित अंगत छवि भूरी ॥
एहि छवियुत गोविंद कृपालू । आदि पुरुष गुण अमित विसालू ॥

दोहा-निरषि प्रभा गोविंद की वार वार कर जोरि ।
वंदन करत विचारि मन हे प्रभु मम मति थोरि ॥२८

श्लोक-अङ्गानि यस्य सकलेन्द्रियवृत्तिमन्ति
पश्यन्ति पान्ति कलयन्ति चिरं जगन्ति ।
आनन्दचिन्मयसदुज्ज्वलविग्रहस्य
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४१॥
अद्वैतमच्युतमनादिमनन्तरूप—
माद्यं पुराणपुरुषं नवयौवनञ्च ।
वेदेषु दुर्लभमदुर्लभमात्मभक्तौ
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४२॥

छंद-श्री मत गोविंद करुणाकंद आनंद घन भूरि भरे ।
तव शक्ति अचिंत्यं वैभव नित्यं रूप अनंतं सुषद हरे ।

यह निज मन जानी विधि कहँ वानी अमित शक्ति सुष रासि भरी ॥
प्रभु अंग उजागर सब गुण सागर नागर नंद किसोर हरी ॥५९
कर कंज तिहारे अति गुण भारे देषि सकै चर अचर सबै ।
तव नयन विसाला परम रसाला पालन शक्ति अनूप फबै ॥
पुनि अपर सुहावन अंग जु पावन अपर क्रिया करि सकै सही ।
तुम ही इमि भाषे मै लषि राषे सबठा मम पद पानि अही ॥६०

दोहा—चिनमय अरु आनंद घन उज्जल परम अनूप ।
वंदौ श्री गोविंद पद सुंदर सुषद सरूप ॥६१

सोरठा—अतिहि विलच्छण रूप ताही कौं अति पुष्ट करि ।
कहत जु रूप अनूप गुण श्लोक करि ताहि सौं ॥६२

चौ०-हे अच्युत अनादि गुणसागर । पुनि अनंत तुम आद्य सुषाकर ॥
नव यौवन अरु पुरुष पुराणू । आदि पुरुष यह वेद प्रमानू ॥
नहि समता कोउ रूप विसेषी । आपुहि विस्मय निज तन पेषी ॥
पाइ महत प्रलया यदि कवहू । नहि तव भक्त होइ चुत तवहू ॥
एहि ते अच्युत है तव नामू । एक सर्वं गत अरु परधामू ॥
पुनि अक्रूर वचन इमि गायो । हरि पद अति दुर्लभ जु वतायो ॥
अहो कंस मोहि अति सुषदीना । परम अनुग्रह मो प्रति कीना ॥
पठयो मोहि कृष्ण के पासा । देषि हौ चरण सरोज सुषासा ॥
नष मंडल दुति परम प्रकासू । जा लषि तरे अघी वहु आसू ॥
अज भव सुर पूजित सब काला । तव पद पंकज परम कृपाला ॥
पुनि अक्रूर वहुत विधि भाषे । पद सरोज हरि को हिय राषे ॥
जा पद रमा अजादि सुरेसू । वंदहि नित प्रति गत अंदेसू ॥
सो पद कंज देषि हौ आजू । जो वृज जुवतिन सभा विराजू ॥
पुनि उरोज निज धरि सोइ चरणा । जो भक्तनि कौ भय दुष हरणा ॥

दोहा—दरसायो निज लोक प्रभु गोपन कहु सतभाय ।
नंदादिक तेहि देषि कै रहे चकित चित चाय ॥६३

सोरठा–तहाँ निगम सख्यात धरे रूप अति सोहनो।
निरषि स्याम कौ गात अस्तुति करत प्रकार वहु ॥६४

चौ०-एहि विधि शुक मुनि की वर वानी। वरन्यो कृष्ण कथा रसखानी॥
तहँ कोउ सुनि वोल्यो एहि रीती। कहन लाग मन गुनि विपरीती॥
अहो ईश के तुल्य न कोई। इमि तुम कह्यो सिद्धि का होई॥
अरु समता कहु भई न कैसे। देत दास कहु निज वपु वैसे॥
दियो दास कह निज वपु जौंपै। रह्यो कहा अवसेष जु तो पै॥
इमि विपरीति कही जन वानी। तेहि सन मानि कहत सुभ वानी॥
देत भक्त निज कहँ समरूपा। तद्यपि चुत नहि रूप अनूपा॥
तौ तुम नारायण कहु गायो। यह सब गुण तौ तहाँ लगायो॥
उनहू मैं अच्युत गुण आही। अरु अनादि पद तिनहु लहाही॥
तासु उतर सुनियौ मन लाई। अैसें नहिं जे तव उर आई॥
कृष्ण अनादि आदि नहि जाकी। करी सवैं नुति एहि विधि ताकी॥
अथवा जहँ लगि जग वेवहारू। कारण परम कृष्ण सुष सारू॥
आपु सदा हरि स्वयं प्रकासू। कारण रहित आपु सुषरासू॥
अहो कृष्ण इकले केहि भाँती। पालहि अषिल जगत वहुजाती॥

दोहा–तहँ समुझौ एहि भाँति तुम कृष्ण स्वरूप अनंत।
एहि विधि पालै जगत सव करुणा कर भगवंत ॥६५

सोरठा–अथवा अपर प्रकार सुनहु कृष्ण अैस्वर्य तुम।
जो सव जग वेवहार कारण सवकौ कृष्ण लषु ॥६६

चौ०-अपर पच्छ वोलेउ एहि रीती। तुम तौ वचन कही विपरीती॥
नारायण ते अमित प्रकारा। प्रगट्यौ है यह सव संसारा॥
ताहि कहत अैसे नहि आही। कहै जानि यहु तुम चितचाही॥
आदिहि जासु विलास अनूपा। सोइ नारायण अहैं सरूपा॥
अहो सुन्यो यह वचन तिहारी। पुरुषाख्यान भयो निरधारी॥
ताहि कहत अैसी नहि होई। कहै सत्य हम जानहु सोई॥
कह्यो विलास रूप जो गाई। तेहिते परे रूप सुषदाई॥

सो पुरुषाख्य नाम अति रूरो। सब विधि अहै सोइ एक पूरो ॥
तौ वृद्धत्व सहज तहँ आई। जासु कह्यो तुम गुण वहु गाई ॥
किमि यह होइ कहौ तुम जैसे। नव जौवन किसोर हरि वैसे ॥
अहै पुरातन जोइ सुष सागर। नव किशोर वय सोइ बृज नागर ॥
अहै अनिर्वचनीय सोइ जानू। नित्य सरूप ताहि तैं मानू ॥

दोहा–अहो वेद अैसे कहै नारायण है आदि।
सब कौ कारण ईस हरि लगै वचन तव वादि ॥६७

सोरठा–वेद विषे ये तज्ञ समुझै तत्व विचारि वहु।
मन वच होहि श्रुतज्ञ जानहि ते वह रूप वर ॥६८

चौ०-तिनकहु जानिय चतुर सयाने। जिन श्रुति तत्व हीये पहिचाने ॥
तिन कहु सुलभ अहै हरि रूपा। जो हम वरने परम अनूपा।
अहै परंतु भक्ति विनु कोई। जानि न सके कैसो किन होई ॥
अच्युतादि त्रयपद करि गाये। सो अति कठिन भक्ति करि पाये ॥
वहुरि एकादश महँ मुनिवरणा। कृष्ण सनातन जन भय हरणा ॥
महा प्रलय में जो अविशेषू। कृष्ण देव है परम विशेषू ॥
पुनि निज मुष हरि कह्यो वषाँनी। परापर द्रिष्टा मैं सुषषानी ॥
एहि तें पुरुष पुराण सुजाना। कृष्ण देव भगवंत वषाना।
गूढ़ पुराण पुरुष वनमाली। माथुर तिय कहु सुषद रसाली ॥
पुनि नव जौवन रूप सदाही। पुरा पुराण रूप नव ताही ॥
अरु शुक वचन वहुत वहु भाती। कृष्ण सरिस नहि सुभग सुहाती॥
नव नव रूप नित्य प्रति जासू। इन सम केहै मंगल रासू ॥

दोहा–आनन जासु विलोकि वर गोपी गति मति भूलि।
अपर जीव चर अचर जे निरषि वदन मन फूलि ॥६९

सोरठा–दशम नवम के माहि कही रूप की षानि प्रभु।
अपर न सुंदर आहि कृष्ण सरिस तिहु लोक मैं ॥७०

चौ०–सत्य शौच सौभाग्य अनूपा। महा काँति आदि सुष रूपा ॥

यह सब कहे कृष्ण गुण ग्रामा । बसहि नित्य विग्रह वर धामा ॥
असि समत्व वांछहि बहु तेरे । सपनेहु मिलै न जतन घनेरे ॥
बहुरि तापिनी श्रुति इमि गायो । कृष्ण सरूप अनूप बतायो ॥
गोप वेश अंबुद वपु सोहन । तरुण कल्पद्रुम तर मन मोहन ॥
लषि गोपीजन गति मति भूली उपमा तेहि सम अपर न तूली ॥
तरुण शब्द पोछे जो भाषे । सोइ नव जौवन हिय धरि राषे ॥
सोभा निधि प्रधान जदुनंदन । जन सुष प्रद अरु दुष्ट निकंदन ॥
श्रुति कहु दुर्लभ अस हरि रूपा । श्रीशुक वरन्यो त्रिसद अनूपा ॥
हरि पद रज श्रुति चाहत अजहू । मिलै न तिनहि जतन करि जबहू॥
अतिसय सुलभ भक्ति करि सोई । श्रुति नित रज वांछहि मन जोई॥
परेह भूसन इमि शुक बाँनी । कृष्ण रूप सम अपर न जानी ॥

श्लोक—पन्थास्तु कोटिशतवत्सरसम्प्रगम्यो
वायोरथापि मनसो मुनिपुङ्गवानाम् ।
सोऽप्यस्ति यत् प्रपदसीम्न्यविचिन्त्यतत्त्वे
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४३॥
एकोऽप्यसौ रचयितुं जगदण्डकोटिं
यच्छक्तिरस्ति जगदण्डचया यदन्तः ।
अण्डान्तरस्थपरमाणुचयान्तरस्थं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४४॥

चौ०-अहो अचिंत्य तत्व मम स्वामी । सिगोविंदपद कंज नमामी ॥
आदि पुरुष भगवंत अनंता । भजौ सदा तव पद सुषवंता ॥
कोटि कोटि सत संवत कोई । मुनि मन मै तव पथ लह सोई ॥
पवन लहै तव पंथ न कबहू । तव बिनु कृपा आदि अरु अजहू ॥
तव चरणारविंद जेहि आसा । कोउक लहै सो बिनुहि प्रयासा ॥
बहु आचरज देषि तव नारद । मौन गही मन परम विसारद ॥
एक रूप तुम भये अनंता । गृह गृह प्रति महँ लषि भगवंता ॥

सोरह सहस गेह सुषकारी । कलि प्रिय मुनि गृह सकल निहारी ॥
अमित भाँति गृह गृह प्रतिदेषी । विस्मित मन हिय हरप विपेषी ॥
ऐसेहि तापिनी साख वषाने । एक सर्वगत कृष्णहि माने ॥
सकल नियंता पुनि वहु रूपा । कृष्णदेव गुण चरित अनूपा ॥
आतम ईस अतर्क्य प्रभाऊ । शक्ति सहस्र अंत नहि काहू ॥
दोहा—जे अचिंत्य तव भाव प्रभु लहि न सकै कोउ पार ।
करै तर्क न वहुत विधि लहै न छोर अपार ॥७१
सोरठा—कह्यो अचिंत्य सुजान सुनिय तासु लच्छण कहौं ।
प्रकृति पारगत गान सो अचिंत्य लच्छण अहै ॥७२
चौ०-अब अचचिंत्य शक्ति प्रभु केरी । वरणत विधि वहु जतन घनेरी ॥
अल्प वयक्रम कृष्ण कृपालू । अमित भये जन दीनदयालू ॥
वछरा वत्स पाल वहु रूपा । अमित विभूषण चलनि अनूपा ॥
पुनि अज देखत ही घन स्यामू । भये अचिंत्य रूप सुख धामू ॥
पीत वास मुरली कर धारी । चहु दिसि लख्यो रूप सुषकारी ॥
पुनि अनंत ब्रह्मांड समाजू । तहँ तहँ के अधिपति जुवराजू ॥
आविरभाव भयेउ सव तवही । कृष्ण विचारयौ सम मह जवही ॥
एक कृष्ण-गुण अमित न पारू । रचत अंड वहु छनक माझारू ॥
जासु रोम अवली के माहीं । अमित अंड तहँ भ्रमत सुहाहीं ॥
अनुतें अनुतेंहि ठौर लषाही । अति सै महत रूप हरि आही ॥
सकल भूत महँ प्रविसि मुरारी । सकल भूत विदधाति विचारी ॥
सो मम स्वामी सकल नियंता । कृष्णदेव भगवंत अनंता ॥
दोहा--एक देव सव भूत महँ गूढ़ रहत कह वेद ।
तासु चरण चित रैन दिन भजौ सकल तजि षेद ॥६३
श्लोक-यद्भावभावितधियो मनुजास्तथैव
सम्प्राप्य रूपमहिमासनयानभूषाः ।
सूक्तैर्यमेव निगमप्रथितैः स्तुवन्ति
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४५॥

छंद—अब कृष्ण साधक अनुज के जे भक्त कोउ जग मैं अहै ।
महिमा कहत अब तासुकी अरु नित्य पद जिमि वै लहै ॥
मन जासु भावित भाव जसुमति सुपन मैं चित चुभि रहै ।
मन वचन काय न अपर जानहि कंज पद आसा गहै ॥७४
तेहि देत मागे विनहि निज सम रूप वैभव सकल जू ।
निज जान आसन भूषणादिक अपर जौ कछु चहइ जू ॥
इमि कहत निगम पुराण मुनि गण कृष्ण परम कृपाल जू ।
मैं सरण श्री गोविंद तव पद कंज सव सुष सारजू ॥७५
जिमि गोप जन कहु शील वय गुण अपर वेश विलास हू ।
सव लसत एक सम वेष संतत कृष्ण संगी नरन हू ॥
अरिभाव करि शिशुपाल आदिक भजे शयनासन मह्हू ।
तेहि दई निज सारूप्य जदुवर विदित गुण जगदिशि चह्हू ॥७६
दोहा—ऐसे कृष्ण कृपाल प्रभु अरि कहु निज पद दीन ।
भाव सहित जे कोउ भजै तेहि छन ता भव छीन ॥७७

श्लोक—आनन्दचिन्मयरसप्रतिभाविताभि-
स्ताभि र्य एव निजरूपतया कलाभिः ।
गोलोक एव निवसत्यखिलात्मभूतो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि । ४६॥

चौ०-कृष्ण प्रेयसी के गुण भारे । कवि कोविद श्रुति गण सव हारे ॥
कहि को सकै तासु गुण भूरी । रसिक जनन को जीवन मूरी ॥
परम रमाकर तहाँ निवासू । जहाँ कामधुक लोक प्रकासू ॥
तहाँ वसत संतत प्रभु आपू । प्रिया सहित जे परम प्रतापू ॥
जे गोलोक अषिल जन वसही । अरु प्रिय वर्ग जहाँ लौ लसही ॥
आतम भूत सकल मह सोई । अरु व्यभिचार रहित गति जोई ॥
तासो अति गरिष्टता आई । तासु हेतु विधि कहत वनाई ॥
कला शब्द जो कह्यो वषानू । अर्थ तासु अस अहै प्रमानू ॥

अति आनंदिनि शक्ति विशाला। तासु वृति कर श्रीगोपाला ॥
आँनद चिनमय रस मुनि गाये। परम प्रेम जा शुक्ल सुभाये ॥
पूरव पूर्व तेहि रस करि गोपी। वासित जन्म लही चित सौंपी ॥
तासु संग तहँ वसत सुजाना। जिमि कोऊ प्रति उपकृत करिमाना॥
दोहा- तहाँ सुनौ आचर्य पुनि निज सरूप तहँ वास।
तहाँ वसत एक नारिव्रत नहि परदार विलास ॥७८॥
सोरठा-—परम रमा जेहि नाम तहँ परदार न संभवै।
तहँ स्वदाररत स्याम एहि विधि लीला नित्य लषु ॥७९
चौ०-जो स्वदाररत लीला आही। उत कौतुक करि ठाप्यो ताही ॥
उत्कंठा पोसन के काजा। उत चह लीला परम समाजा ॥
जो प्रापंचिक प्रगट जु लीला। तहँ परदारा रत सुषसीला ॥
जो अव्यक्त लीला प्रभु केरी। सो गोलोक मांझ नित हेरी ॥
तहँ निज रूप वसत सब काला। रमत स्वदार अपर नहि वाला ॥
इत एक दिवस कृष्ण मन आई। गोपी जन कहु निकट बुलाई ॥
मम गुरु छुधित भये दुरवासा। भोजन लै गमनहु तेहिं पिपासा ॥
ते सब चली तुरित तेहि ठामू। आगे लषि रवि तनुजा वामू ॥
चढ़ी घोर धारा जल जासू। फिर आई अव हरि पै आँसू ॥
तव श्रीकृष्ण ताहि सनभाषी। जाहु गिरा यह मम तिय राषी ॥
कृष्ण नित्य अच्युत जो होही। हे रविजा मारग है मोही ॥
हसि मारग जमुना तव दीनी। गोप वधू विस्मित रस भीनी ॥
दोहा-एहि विधि लीला कृष्ण की व्यक्ताव्यक्त अनेक।
जानहि रसिक जु विज्ञ जन जिन कहु सुभग विवेक ॥८०॥
सोरठा- कही नाम गोलोक सो जानौ गोकुल अहै।
कृष्णचन्द्र को ओक पावन परम विचित्र अति ॥८१॥
ऐसी लीला जासु सो गोविन्द मम हिय वसौ।
को लषि सकै विलासु आदि पुरुष नव नित्यवय ॥८२

दोहा-जासु चित्त माया कलित भ्रम तेहि अहै अनादि ।
जिमि गउ उरपथि समुझि विनु षोवत जन्म सुपादि ॥८३॥

श्लोक—प्रेमाञ्जनच्छुरितभक्तिविलोचनेन
सन्तः सदैव हृदयेषु विलोकयन्ति ।
यं श्यामसुन्दरमचिन्त्यगुणस्वरूपं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४७॥

चौ०-जद्यपि जे गोलोक निवासी । लषि न सकैं हरि रूप प्रकासी ॥
अहै अचिंत्य गुण शुद्ध सरूपा । कठिन देषिवो परम अनूपा ॥
किमि देषन की शक्ति लहाई । इमि पूछे कोउ वचन वनाई ॥
कहत ताहि प्रति अति सुषमानी । सुनिय चित्त दै हे रसषानी ॥
प्रेम नाम अंजन गुण भूरी । ताकरि द्रिष्टि होइ अति रूरी ॥
कृष्ण भक्ति रुपा द्रिग जासु । सो देषै हरि रूप प्रकासू ॥
भक्ति रूप लोचन जेहि होई । प्रेमांजन करि निरमल सोई ॥
अरु गोलोक माझ आवासू । तव अंतहपुर ताहि प्रकासू ॥
तहँ गीता के वचन प्रमाना । सुनियो हे तुम चतुर सुजाना ॥
जे कोउ भजे भक्ति युत मोही । मैं तेहि भजौ ताहि विधि जोही ॥
प्रेम भक्ति करि हिय जेहि केरो । भयो शुद्ध वहु भाँति घनेरो ॥
तव प्रकाश एहि कौ कछु होई । जव परिपक्व प्रेम भा सोई ॥
तव सख्यातकार सो भएऊ । दरसन जोग्य शक्ति वह लहेऊ ॥

छंद-तव होइ सोइ सख्यात सेवा जोग्य वह नर जानहू ।
प्रभु रूप गुण सव तर्कनाते रहित सुंदर मानहू ।
अथवा विशुद्ध जु सत्व मूरति निगम नित्य वषानई ।
जेहि माझ पंचाशत महागुण दिव्य वपु मुनि जानई ॥८४॥
सत चित अनंद सु परमसुंदर प्रकृति पर सुष सागरं ।
जेहि शुद्ध हिय तेइ संत संतत लषहि कृष्ण सुपाकरं॥

बिनु प्रेम भक्ति उपाय बहु विधि करत नर पचि पचि मरैं।
ते रहित सुषगत सुकृत पापी जे न हरि पद आदरैं ॥८५

दोहा—एहि विधि विधि बहु बिनय करि पुनि कर जोरि बहोरि।
नंद सुअन गोविंद की अस्तुति करत न थोरि ॥८६

श्लोक—रामादिमूर्त्तिपु कलानियमेन तिष्ठन्
नानावतारमकरोद भुवनेपु किन्तु।
कृष्णः स्वयं समभवत् परमः पुमान् यो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४८

दोहा—सोई कृष्ण कृपाल प्रभु कबहुक औसर पाइ।
स्वयं आपु निज अंस करि गह अवतार बनाइ ॥८७

चौ०-सोइ बरणत एहि ठाम बनाईं। कृष्ण कथा संतत सुषदाईं॥
कृष्ण नाम जो करयौ बषानू। परम पुरुष है तासौं जानू॥
जो निज कला नियम जेहिं नामू। नियता नाम शक्ति गुण धामू॥
तासु प्रकाश रूप अति भारी। रामादिक अवतार सुषारी॥
जो वह नियता शक्ति बषाना। ता सह रामादिक सुभयाना॥
ता मह रहि कर मूर्ति प्रकाशू। पुनि नाना अवतार बिलासू॥
स्वयं कृष्ण जो निज अवतारू। दनुज मारि भूभार उतारू॥
सोइ लीला विशेष कृत नामा। नाम गोविंद परम सुष धामा॥
तापद संतत भजइ सुषारी। आदि पुरुष निज जन हितकारी॥
ऐसेहि शुक मुनि कहां बषानी। दशम माझ अति सुभग सुबानी॥
कछप मीन वराह सुषाकर। अरु नृसिंह राजन्य सुभाकर॥
हंस विप्र बिबुधेस अनेका। करि अवतार एक ते एका॥
पालि लोक त्रय जन सुष दीनी। अरु चरित्र प्रभु बहु विधि कीनी॥
तिमि अब एहि अवतार गोसाईं। भूमि भार हरि हे जदुराईं॥
निज जन पालि सुषद जग करहू। जे तव सरण तासु भव हरहू॥
एहि विधि मुनि गाये गुण नाना। कृष्णदेव पर ब्रह्म बषाना॥

दोहा-एहि श्री गोविंद गुण गाइ गाइ विधि आपु।
पुनि हरषित चित अपर कछु बरनत सुभग अलापु ॥८८

सोरठा-कृष्णदेव पर ईश अवतारी करि वरनियो।
पूरण अरु जगदीस अव सरूप करि तैसोई ॥८६

श्लोक-यस्य प्रभा प्रभवतो जगदण्डकोटि-
कोटिष्वशेषवसुधादिविभूतिभिन्नम्।
तद् ब्रह्म निष्कलमनन्तमशेपभूतं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४६

चौ०-उभय एक रूपत्व प्रमानू। उत्तम आविर्भाव सुजानू॥
धर्मि रूप गोविंद गोसाई। धर्म रूप सुनि ब्रह्म बताई।
जिमि रवि मंडल अरु रवि रूपा। एक भाव नहि भिन्न सरूपा॥
तद्यपि मंडल अचल सुभायक। श्री गोविंद सकल को नायक॥
ब्रह्म कहै श्रुति कारण तासू। इमि गीता महं कर्यो प्रकासू॥
जासु प्रभा करि अंड कटाहू। कोटि कोटि उपजै छन माहू॥
पुनि वसुधा दिवि भूति अनेका। भिन्न भिन्न करि लषहु विवेका॥
पुनि एकादश भागवत माही। आपु कह्यो श्री मुख करि चाही॥
छिति आकाश आप अरु जोती। अहम ज्ञान मिले जग होती॥
पुरुष विकार व्यक्त रज आदी। सबके पर हो ब्रह्म अनादी॥
पुनि गीता महं श्री मुष वरणा। ब्रह्म प्रतिष्टा मै भय हरणा॥
जाके अंतर अंडकटाहू। सहित आवरण दश गुण जाहू॥
पुरुष प्रकृति गुण आदि अनेका। अपर परं पद अहै न एका॥
सबके परे परे जो अहई। परमब्रह्म यामुनि मुनि भनई॥

दोहा-पुनि ध्रुव असेहिं वरनियो श्री चतुर्थ माहि।
जो सुष तव पद भजन ते सो कछु अनत न आहि ॥६०

सोरठा-सो पद चहिअ न मोहि जहा काल ते पतन ह्वै।
यह जाचौं प्रभु तोहि तव गुण संतत मै सुनौ॥ ६१

आतम विषै आराम ताहू कौ मन चलतु है।
कृष्ण कथा विश्राम सुनहि निरंतर चित्त दै ॥६२
दोहा–एहि विधि श्री गोविंद गुण वरणो सुभग सुरीति।
जौ विशेष की चाहना लषि संदर्भ सुप्रीति ॥६३
श्लोक–माया हि यस्य जगदण्डशतानि सूते
त्रैगुण्यतद्विषयवेदवितायमाना।
सत्वावलम्बिपरसत्वविशुद्धसत्वं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥५०
चौ०·कृष्ण रूप गत महिमा वरनी। सुनहु जगत गत की अव करनी ॥
वहिरंग शक्ति जो माया। कारज तासु अचिंत्य सुहाया ॥
सो वरनत है भलि रीती। कृष्ण सुजस सुनियै करि प्रीती ॥
माया जासु त्रिगुण करि आपू। सृजै अंड जग क्रिया कलापू ॥
तासु विषय सब वेद वषाना। नारायण सोइ सब जग जाना ॥
सतगुण आदि तासु आधिना। जगत चराचरहि प्रविना ॥
श्री गोविंद माया ते दूरी। सबकौ कारण जेहि गुण भूरी ॥
शुद्ध सत्वहु ते प्रभु न्यारे। अति विशुद्ध सत्व सुषसारे ॥
चिन्मय शक्ति वृत्ति सुष रूपा। इमि पुनि विष्णु पुराण निरूपा॥
सत्वादिक गुण परस न जाही। शुद्धहु ते अति शुद्ध कहाही ॥
आद्य पुमान नाम है यातै। माया गुण कहु छुयै न जातै ॥
दै आनंद ताप करि दूरी। मिश्रित गुण सब परिहरि सूरी ॥
दोहा–अहलादिनि अरु संधिनि अरु संवित वर शक्ति।
तव सरूप की शक्ति त्रय एहि विधि वेद निरुक्ति ॥६४
सो सब मै सब ठाम वसि कारज करहि अनेक।
आदि पुरुष गोविंद प्रभु तुम संतत रस एक ॥६५
सोरठा–जेहि विशेष की चाह तौ भगवत संदर्भ लषु।
कृष्ण सकल के नाह ब्रह्म प्रतिष्टा सोई अहै ॥६६

श्लोक-आनन्दचिन्मयरसात्मतया मनःसु
य: प्राणिनां प्रतिफलन्स्मरतामुपेत्य ।
लीलायितेन भुवनानि जयत्यजस्रं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥५१

चौ०-तनमय मोहनत्व की रीती । सोइ बरणत विधि मन करि प्रीती ॥
आनद चिन्मय रस किय गानू । सो वह उज्जल प्रेम प्रमानू ॥
ता रस आलिंगत मन जासू । ऐसो कोउ हरि जन जग वासू ॥
तासु हेतु श्रीकृष्ण कृपालू । सब कहु मोहन छवि सुष धामू ॥
निज छवि अंस अंस परमानू । ताहू को प्रतिबिंब सुजानू ॥
उज्जल रसयुत जो वह प्रानी । तासु वदन पर छवि झलकानी ॥
सुमिरत मात्र ताहि छवि भूरी । उज्जल रस करि दुति ह्वै रूरी ॥
ऐसेहि दशम माझ मुनि गाये । रास माँझ सब प्रगट बताये ॥
सख्यात वितन के वितन सरूपा । कृष्णदेव गुण अमित अनूपा ॥
लीला मात्र भुवन सब जीती । निज जन सुषित किये युत प्रीती॥
आदि पुरुष गोविंद गोसाईं । तव पद कंज संत सुषदाईं ॥
एहि विधि विनय कीन बहु भाँती । कंज सुअन मन प्रीति सुहाती ॥

दोहा-कहि प्रपंच गत कृष्ण की महिमा सुभग विलास ।
बहुरि कहब निज धर्म गत महिमा सुभग प्रकास ॥६७

श्लोक-गोलोकनाम्नि निजधाम्नि तले च तस्य
देवी-महेश-हरिधामसु तेषु तेषु ।
ते ते प्रभावनिचया विहताश्च येन
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥५२

चौ०-देवी हरि महेस जो गाये । मूल माझ यह सब्द सुहाये ॥
तेहि तेहि नाम लोक जे कोई । तासु परे ऊपर लघु सोई ॥
सब ऊपरै लोक वषाँना । अपर तासु तर सकल सुजाना ॥
सर्व व्यापि पुनि श्री गोलोका । अपर न तेहि सम है कोउ लोका ॥

भुवि प्रकासमान सो अहई । श्री वृंदावन वहु गुण लहई ॥
श्री गोकुल गोलोक अभेदा । वरन्यो पीछे उभय अभेदा ॥
सो गोलोक दुषित लषि ताही । गिरिवर धर पाल्यो तुम जाही ॥
विद्यमान जो यह भूमा ही । श्री वृंदावन नाम सुहाही ॥
तहँ पुनि कृष्ण देव जगनायक । नित्य विहारी नाम सुभायक ॥
सुनियत है रिषि मुनि जन कहँही । आदि पुराण क्रोड़ इमि भनही
द्वादशवन वृंदावन राजू । वृंदारचित है चहु वाजू ।
हरि सब ठाम अधिष्टित तहवा । मृग द्विज तरु हरि तनमय जहँवा ॥
ब्रह्म रुद्र आदिक सब देवा । करहि नित्य प्रति हरि पद सेवा ॥
सेतु वंध श्री कृष्ण बनाये । क्रोडा करत सहज सत भाये ॥
वल्लवीजन क्रीडन कै हेतू । रच्यो गदाधर पुन्य निकेतू ।
दरस किये अघ रहै न कोई । परसत पाप जात सब धोई ॥

दोहा—गोप वाल सब संग लै कृष्ण तहाँ नित जात ।
क्रीड़ा करत अनेक विधि जो निज सषनि सुहात ॥९८

सोरठा—वृहत गौतमी माँहि नारद पूछ्यो कृष्ण प्रति ।
द्वादश वन का आहि अरु वृंदावन का अहै ॥९९
है यादव पति स्याम सुनन चहौ तव मुष गिरा ।
कहिये जन सुष धाम सुनन योग्य जौ होउ मैं ॥१००
हँसि वोले जदुनाथ सुनियै नारद चित्त दै ।
वृंदावन की गाथ अहै गोप्य तुम सो कहौ ॥१

चौ०-यह वृंदावन अति रमनीयं । केवल यह मम गृह कमनीयं ।
एहि ठां जे पशु पछि पतंगू । मृग सूकर नर सुर वहु रंगू ॥
जे कोउ वसत अहै एहि ठामू । यह तन तज जै है मम धामू ॥
सकल गोप कन्या इत जेती । जानहु सकल जोगिनी तेती ॥
मम आग्या ते मम पुर वसही । मम सेवा रत संतत लसही ॥
जो जन पंच जानु तै असे । मम शरीर सम लषु मन वैसे ॥

कालिंदी यह नाम अनूपा। नाम सुषुम्ना तासु सरूपा ॥
वहै सुधासव संतत सोई। अपर सुनौ कौतुक चित जोई ॥
वसहि विवुधगण सूक्षम रूपा। श्री वृंदावन ठाम अनूपा ॥
सकल देव मय मम यह रूपा। तजौ न छिन यह विपिन अनूपा ॥
आविर्भाव मोर एहि ठामू। तिरोभाव पुनि करौ सुधामू ॥
युग युग प्रति लीला एहि रीती। करौ निरंतर मन कर प्रीती ॥
दोहा तेजोमय रमनीय अति श्री वृंदावन धाम।
चर्म चक्षु जे नर अहै ते न लषै यह ठाम ॥२
चौ०-यह श्रीकृष्ण रूप सख्याता। अवतारी जानहु हे ताता ॥
एहि के आश्रय वहु अवतारू। क्रोडादिक उपजै वहु वारू ।
सो सव वरन्यो विविध प्रकारा। पुनि कछु सुनियैं अपर विचारा ॥
जो मम नयन सुगोचर आही। श्री वृंदावन सुभग सुहाही ॥
पुनि मम द्रिष्टि अगोचर होई। तेहि ते सरिस प्रकाश जू कोई ॥
सोइ गो लोक माझ तै जानू। इत उत उभय अभेद प्रमानू ॥
जव मम द्रिग प्रकाश अति रूरी। परिकर सहित कृष्ण गुण भूरी ॥
आविर्भाव होत मम ईसा। तवही विपिन सकल जन दीसा ॥
तव ही रस विसेष जो आही। तेहि पोषन हित निज चित चाही ॥
गोपिन सह संयोग वियोगू। वहु विचित्र लीला सुष भोगू ॥
सदाकाल जिमि इत सुषरासू। तैसेहि श्री गोलोक विलासू ॥
या पर वचन कहे वहु भाँती। कल्प तंत्र यामल महँ ख्याती ॥
पंच रात्रि आदिक शुभ ग्रंथा। जा मह कृष्ण विषय सुष पंथा ॥
तहँ तहँ जव अवलोकै कोई। कृष्ण विवेक लहै तव सोई ॥
दोहा—एसेहि दशम मझार पुनि वरनी मुनि एहि रीति।
सो लिषियत एहि ठाम अव सुनत होहि हिय प्रीति ॥३
चौ०-देवकी उदर जन्म लै नाथा। लीला करि जव कियेउ सनाथा ॥
धर्म थापि अधरम किय नासू। द्विभुजधारि वहु रास विलासू ॥

मंद मंद मुसुकनि अति सोहन । थिर चर ताप हरत मनमोहन ॥
वृज वनितन कौ वितन वढाई । दियेउ अमित सुष श्री शुक गाई॥
अैसे श्री निवास जदुनंदा । जन निवास प्रभु आनंद कंदा ॥
वहुरि जु वारिज नाम पुराणा । तहँ वचन वहु अहै प्रमाणा ॥
वेद व्यास कह हे नृप राजू । सुनौ वचन मम सहित समाजू ॥
एक समै हरि सो कर जोरी । विनय करी वहु भांति निहोरी ॥
नित्य विहारी हरि तव रूपा । लखन चहौ मै सुभग अनूपा ॥
तव हरि कह्यो देषावौ तोही । वेद गुप्त मम रूप सु जोही ॥
तेहि छिन मै देख्यो प्रभु रूपा । नील अंवुधर सुभग अनूपा ॥
गोप संग वहु सुभग सुजाती । गोप कन्यका अगनित भांती ॥
कन्या पद करि कहा जनायौ । तासु अर्थ अैसे करि गायौ ॥
अनालाभ तिय धर्म सुभागी । वयस किसोरी हरि अनुरागी ॥

दोहा–पुनि कन्या पद को अरथ कहत औरहि भांति ।
इनकी समता अपर नहिं रूप सुघरता ख्याति ॥४
अथ वृंदावनं ध्यायेत पीछे कही वनाइ ।
एहि विधि कीजै ध्यान नित सो वरनत एहि ठाइ ॥५
नाक लोक ते भ्रष्ट ह्वै इत आयो इमि जानु ।
कन्या शत मण्डित सुभग गोप सहित हिय आनु ॥६

चौ०-अरु गोवत्स गणादि समेता । वृहत षंड मंडि सुष देता ॥
गोप कन्यका सहस सयानी । कंज नयनि सुषमा की षाँनी ॥
तिन करि पूजित नंद किसोरा । सुंदरता गुण रूप न थोरा ॥
तिनी लोक गुर परम सयाने । कृपा सिंधु इमि वेद वषाने ॥
भाव सुमन करि पूजै ताही । सकल गोप कन्या चित चाही ॥
यह सव गौतमें के वचना । गोतमि तंत्र माझ की रचना ॥
तासु दरश के जे अधिकारी । सदाचार महँ कह्यो विचारी ॥
मंत्री मंत्र जपै दिन राती । निज मन निग्रह करि वहु भाँती ॥
गोप रूप प्रभु कृष्ण कृपाला । सो देषै निश्चै तेहि काला ॥

पुनि त्रिलोक मोहन जो तंत्रू । ताके वचन मनहु सुभ मंत्रू ॥
सुभग मंत्र जे निसि दिन जपही । निज मन वस करिकै तन कसही॥
गोंप वेस हरि कौ सोइ देषै । जनि संदेह हिये कोउ लेषै ॥
दोहा—कहे तापिनि के विषै कंज सुग्रन इमि वैन ।
किग्रेउ निरंतर ध्यान मै राषि कृष्ण हिय ग्रैन ॥७
सोरठा—कीनी मै वहु भाँति ग्रस्तुति नंद किसोर की ।
महिमा सो सव ख्याति परम रूप तव मै लष्यौ ॥८
सोपरार्द्ध के ग्रंत परम रूप जन्यौ गयौ ।
रूप न गणहु ग्रनंत गोप वेश मम हिय सदा ॥९
क्षीर पयोधि मझार ग्राद्य पुरुष ग्रवतार जो ।
ग्रपर जे जग ग्रवतार सकल कृष्ण के ग्रंस करी ॥१०
ग्रंसहु को जो ग्रंस ताकरि कै जानहु सकल ।
कृष्ण देव ग्रवतंस ग्रंसी है जानहु सुजन ॥११
दोहा—जा कहु इन ग्ररथ न विषे चाहै ग्ररथ विशेषु ।
तौ भगवत संदर्भ सुभ ग्रंथ ताहि सो देषु ॥१२

श्लोक—सृष्टिस्थितिप्रलयसाधनशक्तिरेका
छायेव यस्य भुवनानि बिभर्त्ति दुर्गा ।
इच्छानुरूपमपि यस्य च चेष्टते सा
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥५३

चौ०-पूरव इमि वरणा वहु भाती । देवी ग्ररु महेश सुर ख्याती ॥
इन सवके जे लोक ग्रनेका । तासु परे हरि धाम जु एका ॥
सो तौ वरन्यो ग्रगनित रीती । वहु पुराण ग्ररु श्रुति पथ नीती ॥
ग्रव प्रत्यक्ष जे सुर गन जेते । ग्रहै सकल प्रभु ग्राश्रय तेते ॥
सो वरनत ग्रव कंज कुमारू । निज मन प्रेम भरे सुष सारू ॥
हे प्रभु तव एक शक्ति ग्रनूपा । सो सव कारज कर सुष रूपा ॥
करि उदभव जग थिति संहरई । तव ग्राश्रय वहु कौतुक करई ॥
दुरगा नाम तासु जनु छाया । करै ग्रनेक कर्म श्रुति गाया ॥

अषिल भुवन पालै सब सोई । तव अग्या टारै नहि कोई ॥
तव इच्छा के सोइ अनुरूपा । करै कर्म सो अमित अनूपा ॥
असे श्री गोविंद कृपाला । अग जग पालक पाल विशाला ॥
एहि विधि दशम माझ श्रुतिगाये । हरि गुण अमित अंतनहि पाये

छंद—तव अंत न पावै श्रुति नित गावै अखिलेश्वर भगवंता ।
बिनु करण कृपाला करम विसाला कर मन कोउ अंता ॥
तव शक्ति अपारा लहिय न पारा इमि सुर सकल भनंता ।
बलि देहि तुम्हारी ऋषि मुनि झारी वसहि नाक सुषवंता ॥१३

सोरठा-मडलीक जिमि कोई डरै चक्कवै भूप सो ।
तिमि सुरगण सब सोइ आग्या तव संतत करहि ॥१४

श्लोक—क्षीरं यथा दधिविकारविशेषयोगात्
सञ्जायते नहि ततः पृथगस्ति हेतोः ।
यः शम्भुतामपि तथा समुपैति कार्याद्
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥५४

दोहा-क्रम पाये ते शम्भु को करत निरूपण जानु ।
अपर न कछु एहि ठाम लपु कारण अपर न मानु॥१५

चौ०-जिमि यह क्षीर शुद्ध सुषकारी । अति उज्जल सब जग हित कारी॥
लहि रंचक षाटे कर संगू । होइ गयो दधि रूप अभंगू ॥
असेहि शंभु भिन्न नहि जानू । कारज कृत गुण दोष प्रमानू ॥
कारण कारज भावज्ञु गाये । अंस तासु जे बहुत सुहाये ॥
तासु यहै द्रिष्टांत तव तावा । जिमि पय ते दधि भिन्न सुहावा ॥
दृष्टांतिक कारण ए दोऊ । निर्विकार संतत है सोऊ ॥
चिंतामणि वत रहित विकारा । अमित शक्ति युत कर्म अपारा ॥
सोइ पुनि आदि कार्य ह्वै रहेऊ । गत विकार संतत श्रुति भनेऊ ॥
एको नारायण जब अहँही । नहि ब्रह्मा नहि शंकर तब ही ॥
स मुनि व्रत चितवन जु कीना । उपजे सकल रहे जो लीना ॥
वेद गर्भ अरु अग जग सारे । पावक वरुण रुद्रगण भारे ॥

इंद्रादिक सुरमुनि बहु भाँती । धनद आदि सुर अगनित जाती ॥
ब्रह्मा रचैं सृष्टि बहु रीती । शिव संहरैं सकल तजि प्रीती ॥
नहि उतपति नहि लय लव लेसा । हरि सब ते है परम परेसा ॥

दोहा—दशम माझ ऐसेहि मुनिवर गिरा वर्षांनि ।
सो इत लिषियत है सुषद अतिसै सुभग सुजानि ॥१६
हरि निगुंण सब ख्यात प्रभु परम पुरुष भगवंत ।
सदा रहत शिव शक्ति युत तीनि रूप गुणवंत ॥१७

चौ०-कहु अभेद देषियत कह ही । सो सब इत अभेद श्रुति लहही ॥
नित्य देव एक नारायण । ब्रह्मा है सो रूप नरायण ॥
शिव अरु शक्र दिनेश सुरेसू । वसु रवि सुअन काल ऋषि ईसू ॥
अध उरध नारायण सोऊ । दिशि अरु विदिसि रूप है सोऊ ॥
बाहर भीतर अपर न कोई । नारायण सब मैं एक सोई ॥
द्वितिय माझ ब्रह्म इमि गायो । नारायण मै सकल बतायो ॥
नारायण प्रेरे जग रचऊ । विविध भाँति सोभा मै सचऊ ॥
तासु अधिन हरैहर आपू । सकल विश्व जे क्रिया कलापू ॥
पुरुष रूप धरि पालत सोई । सकल चराचर जहँ लगि कोई ॥
कारण हू को कारण नाथा । श्री गोविंद कहत श्रुति गाथा ॥
आदि पुरुष तुम परम कृपालू । मम स्वामी सोइ दीन दयालू ॥
भजौ तासु पद पंकज धूरी । सब नर कह भव रुज भलि मूरी ॥

श्लोक—दीपार्चिरेव हि दशान्तरमभ्युपेत्य
दीपायते विवृतहेतुसमानधर्मा ।
यस्तादृगेव हि च विष्णुतया विभाति
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥५५

दोहा—क्रम पाये वरनन कियो हरि है एक स्वरूप ।
गुण अवतार महेश कौ वरन्यो सुषद अनूप ॥१६

सोरठा—सो प्रसंग इत पाइ विष्णु होत गुण युक्त जिमि ।
वरणत सोई चित लाई जा विधि गहत सरूप वर ॥२०

चौ०-दीप अर्चि समता सब जानू। अवतारी अवतार प्रमानू॥
जिमि दीपक ते दीप घनेरा। अहै समान धर्म सब केरा॥
तद्यपि सुनौ वचन चितलाई। जदपि समान धर्म सब ठाई॥
श्री गोविंद अंश जे कोई। तासु अंस एक अपर कहोई॥
गर्भोदक सायी एक गायो। कारण अरणव शयन सुहायो॥
गर्भोदक महु सुभग सरूपा। तिन ते प्रगटे विष्णु अनूपा॥
पीछे दीपक ते जिमि दीपा। कहि ऐसे अवतार निरूपा॥
तासु रीति ऐसे मन गुण हू। कहै गिरा तेहि चित दै सुनहू॥
जिमि कोउ महादीप परकासू। तेहि ते अलप जु दीप विकासू॥
तेहि ते सूक्षम निर्मल जोती। तेहि ते जोति अपर जे होती॥
महादीप के सम वे जैसें। तिमि गोविंद ते विष्णु हतै सें॥
अरु जे शंभु चरित हम गाये। केवल तम गुण कहि समुझाये॥

दोहा-जैसी सूक्षम दीप की सिपा स्याम अति होति।
कज्जलमय गुण शंभु की दीप सीषा सम जोति॥२१

सोरठा-महाविष्णु जे कोइ आगे कहब वनाइ सोउ।
कला विसेष जु सोइ महा विष्णु तेहि ते प्रगट॥२२

श्लोक—यः कारणार्णवजले भजति स्म योग-
निद्रामनन्तजगदण्डसरोमकूपः।
आधारशक्तिमवलम्ब्य परां स्वमूर्तिं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥५६

दोहा-अब कारण अरणव सयन पुरुष आहि जे कोइ।
तासु रूप वरणन करत अपर न तेहि सम होइ॥२२

चौ०-जो कारण अरणव जल माही। करत जोग निद्रा चित चाही॥
जगत दंड बहु विधि जो भाषा। निज रोमावलि महु धरि राषा॥
ऐसो पौरुष है जग जासू। अमित क्रियावल श्रुति कह तासू॥
चतुर व्यूह मुनि वेद वखाँना। संकरषन जेहि नाम सुजाना॥

तासु अंस सहसान न जानू । तेहि अवलंबि क्रिया सब मानूं ॥
जो कारण अरणव प्रभु गायो । तिन सब शक्ति भाँति इहि पायो॥
अैसे श्रि गोविंद गोसाईं । जासु अंस वहु अंस बताई ॥
वहु ब्रह्मांड जो मंडल आहीं । तेहि पालन समरथ है जाही ॥
सो अवतार कहा हम गाई । कारण अरणव मांझ बताई ॥
कह्यो महा ब्रह्मा पुनि जानू । महाविष्णु पुनि करयो बषानू ॥
पुनि इनते अभेद करि गाये । वहु दृष्टांति तहा पुनि ल्याये ॥
श्री गोविंद लीला यह जानू । अपर न संसय हिय कछु आनू ॥

दोहा-करुणासिंधु कृपाल प्रभु श्री गोविंद सुषदानि ।
वंदौ पद पंकज परम मुख्य मुख्य तर जांमि ॥२३॥

श्लोक—यस्यैकनिःश्वसितकालमथावलम्ब्य
जीवन्ति लोमबिलजा जगदण्डनाथाः ।
विष्णुर्महान् स इह यस्य कलाबिशेषो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥५७॥

चौ०-कृष्ण एक परब्रह्म वषाना । इनते अपर न कोऊ श्रुति गाना ॥
लक्षण तासु कहत अब गाई । सुनहु चित्त दै हे सुषदाई ॥
जासु एक स्वासा करि कालू । तेहि अवलंबि सकल जग जालू ॥
जगत अंड नायक जे कोई । विष्णु आदि जगपति है जोई ॥
तेहि आश्रित सब रहैं सदा ही । जहाँ जासु अधिकार लहाँही ॥
सावधान संतत सब ठामू । आज्ञा पालि करैं सब कामू ॥
सो गोविंद आदि परधामा । जाके यह लक्षण सुषधामा ॥
वंदौ तासु चरण वर कंजू । जन मन रंजन भव रुज भंजू ॥

श्लोक—भास्वान् यथाश्मशकलेषु निजेषु तेजः
स्वीयं कियत् प्रकटयत्यपि तद्वदत्र ।
ब्रह्मा य एष जगदण्डविधानकर्त्ता
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥५८

चौ०-देवी आदिक जे जग कोई । तिन कहु आश्रय हरि है सोई ॥
यह सब बरणे बहुत प्रकारा । अब कछु बरणत अपर विचारा ॥
ब्रह्मा कहु अति भिन्न बखाँनी । जीव भाव अति पुष्ट सुजानी ॥
सोइ देपाइ विधि अस्तुति करई । इष्टदेव संतत हिय धरई ॥
दोहा-जैसे रवि निज तेज करि सकल पषाननि मांहि ।
व्यापि रह्यौ सब ठौर सोइ कहु कछु अधिकी आहि ॥२४
सोरठा-सूर्य कांति असनाम पाहन जगत प्रसिद्ध सोइ ।
अधिक तेज तेहि ठाम दहन शक्ति तहँ रवि लपौ ॥२५

चौ०-जिमि रवि शक्ति पाइ वह पाहन । दहन शक्ति तेहि स्वतह सुहावन
तैसेहि प्रभु पालै सब जीवा । आपु नित्य पर तजै न सीवा ॥
तेज जाहि मह देत वेशेषा । सो तस करम करत जग देषा ॥
तिमि प्रभु निज उपाधि को अंसू । ताकरि ब्रह्मा जग अवतंसू ॥
रहि ब्रह्मांड माझ जग रचई । व्यष्टि सृष्टि करता सब करई ॥
अथवा अपर रीति करि याही । बरनत है सुनियौ चित चाही ॥
महा ब्रह्म जो कह्यो बखाँनी । सोइ इत जानहु निज हिय जाँनी ॥
अैसेहि महाशंभु कह जानू । जगत अंड करता जग जानू ॥
जद्यपि दुरगानाम जु माया । अति प्रताप पीछे तेहि गाया ॥
कारण अरणव सोवन हारू । तासु कर्म सब करै सुसारू ॥
गर्भोदक साई जग ईसा । तिन सें ब्रह्मा विष्णु सुरीसा ॥
प्रगट होत इमि श्रुति सब गावा । तुम कैसे करि मोहि बतावा ॥
जौं कदाचि कहियै नाथा । तहा सुनौ मम मुख की गाथा ॥
सब कहुं आश्रय श्री नदनंदा । तुम बिनु अपर को है ब्रज चंदा ॥
दोहा-सब कहु आश्रय एक हरि श्री गोविंद कहँ जाँनि ।
भजौ निरंतर युगल पद सब जग मंगल पाँनि ॥२६
श्लोक—यत्पादपल्लवयुगं विनिधाय कुम्भ-
द्वन्द्वे प्रणामसमये सगणाधिराजः ।

विघ्नान् विहन्तुमलमस्य जगत् त्रयस्य
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥५६

दोहा—जासु पाद पल्लव युगल हिय धरि गणपति देव ।
सकल विघ्न नासहि तुरित जो कोउ ता पद सेव ॥२७

सोरठा—तीनि लोक महँ कोउ सुमिरै गण अधिराज कौ ।
विघन लहै नहि सोउ अस प्रताप पद कंज कौ ॥२८
जो इमि कहै बनाइ गणपति नुति तोहि ना घटै ।
ताहि कहत समुझाइ न्याय कैमुतिक जानियहु ॥२९

दोहा—जासु पाद प्रगटी सरित शिव धारी निज सीस ।
भए सुमंगल मूल हर तव पद महिमा ईस ॥३०

श्लोक—अग्निर्मही गगनमम्बु मरुद्दिशश्च
कालस्तथात्ममनसीति जगत्त्रयाणि ।
यस्माद्भवन्ति विभवन्ति विशन्ति यञ्च
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥६०

दोहा—पावक पानी गगन महि मरुत दिशा अरु काल ।
मन आदिक त्रयलोक सब अपर जीव जगजाल ॥३१

सोरठा—जहँ ते सब प्रगटाइ पालन सब की जाहि ते ।
पुनि सब तहाँ समाहि असे श्री गोविंदप्रभु ॥३२

श्लोक—यच्चक्षुरेप सविता संकलग्रहाणां
राजा समस्तसुरमूर्तिरशेपतेजाः ।
यस्याज्ञया भ्रमति सम्भृतकालचक्रो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥६१

दोहा—कोउक सविता की कहै सर्वेश्वर गुण भूरि ।
ता प्रति कहत गोविंद बिनु को है भव रुज मूरि ॥३३

सोरठा—द्वादश जे रवि देव तासु प्रकाशक कृष्ण प्रभु ।
निज मुष श्री जदु देव कह्यो जु गीता माझ इमि ॥३४

दोहा—जो रविगत यह तेज वर सब कहु करै प्रकाश ।
पावक अरु शशि माझ लघु मेरो तेज बिकास ॥३५

सोरठा—मो डर ते चल पौन मो डर ते रवि नित फिरै ।
सब वानी सब गौन सकल कृष्ण किंकर अहै ॥३६

चौ०-सकल ग्रहन को जो नृप आही । नाम दिवाकर मुनि कहै जाही॥
अरु असेष सुर तेज जहाँ हैं । जा करि जगत प्रकाश लहा हैं ॥
आज्ञा पाइ जासु की सोई । काल चक्र वस नित फिर जोई ॥
अैसे श्री गोविंद गोसाई । भजौ तासु पद मै चित लाई ॥

श्लोक—धर्मोऽथ पापनिचयः श्रुतयः तपांसि
ब्रह्मादिकीटपतगावधयश्च जीवाः ।
यद्दत्तमात्रविभवप्रकटप्रभावाः
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ।।६२।।

चौ०-ब्रह्मादिक अरु कीट प्रजंता । जीव अनंत जासु महि अंता ॥
धर्मादिक फल चारि सुभायक । जाहि देत जस ह्वै तेहि लायक ॥
सो प्रभाव जग विदित सुहावन । श्री गोविंद पद पावन पावन ॥
भजौ निरंतर मन क्रम वानी । जाहि भजै लहै सुष निधि षांनी ॥
सकल ईस के ईस सुजानू । कृष्णदेव है श्रुति किय गानू ॥
जेहि परजन्य सरिस गुण भाऊ । तेहि सम अपर न है जग काऊ ॥
तद्यपि देत जासु जस करमा । फल पुनि लहत सत्य जस धरमा॥
भक्त पत्त पाती पन रोपी । गुण अैगुण तह गणत न कोपी ॥

श्लोक—यस्त्विन्द्रगोपमथवेन्द्रमहो स्वकर्म-
बन्धानुरूपफलभाजनमातनोति ।
कर्माणि निर्दहति किन्तु च भक्तिभाजां
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥६३

दोहा—श्री गोविद प्रभु सुरन को देत अमित सुष ताहि ।
करमन के अनुकूल सोउ जिन जस किय मन चाहि ॥३७

सोरठा–भक्तन को हित मानि करम तासु सब नास करि ॥
देत सुभग रसजानि जो नहै तिहु काल मैं ॥३८

चौ०-अरि के भाव भजे जे कोई। ताहि देत उत्तम फल सोई ॥
पुनि निज मुख गीता के माहो। कह्यो आप अर्जुन के पाही ॥
सकल भूत मह मैं सम अहऊ। नहि देषी नहि प्रिय कछु करऊ॥
भक्तियोग कर जो मोहि भजई। ताहि भजौ मैं सुष सो लहई ॥
जो मम जन मोहि भजै निरंतर। प्रेम युक्त तजि कपट पटंतर ॥
योग क्षेम ताकौ मै वहऊ। नहि सुधि तासु नेक परिहरऊ ॥

दोहा–निज वैरी को देत जो अभय दान सुष कंद।
एहि ते तव पद कंज मैं भजौ जहँ सुख वृंद ॥३६

श्लोक—यं क्रोधकामसहजप्रणयादिभीति–
वात्सल्यमोहगुरुगौरवसेव्यभावैः।
सञ्चिन्त्य तस्य सदृशीं तनुमापुरेते
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥६४

चौ०-अब निज इष्ट उदार सुभाऊ। सोइ वरणत विधि अति चित चाऊ॥
जो मम प्रभुहि काम हित भजई। क्रोध भाव दृढ तिन मन धरई ॥
सख्य भाव द्रिढ कोउ कर जानी। वात्सल्य कोउ कर मन बानी ॥
सव विस्मरण भाव जेहि होई। परब्रह्म कुलकनि है सोई ॥
मम पितु हरि यह भाव सुषारी। प्रभु जान्यो यह सुत सुषकारी ॥
अथवा सेव्य भाव भज कोई। दास्य भाव सोई अपर न होई ॥
कव नेहु भाव भजै हरि चरणा। सो उत्तम लह फल विधि वरणा॥
जो निज दासन कौ हरि देही। क्रोधी वे सहज गहि लेही ॥
अस उदार औ सील सुभाऊ। प्रभु सम अपर न देष्यौ काऊ ॥
पुनि हरि निज मुख असेहि भाषी। श्रुतिपुराण सव मुनिगण साषी॥

दोहा–अैसे ही श्री भागवत मैं कही वचन सुभ रीति।
सिसुपालादिक तरि गये वैरभाव की रीति ॥४०

दोहा—जे अनुरक्त चित्त ह्वै चरण भजै नर कोइ ।
ताकी गति मै किमि कहौ जो सुष वा कहँ पोइ ॥४१

श्लोक—श्रियः कान्ताः कान्तः परपपुरुषः कल्पतरवो
द्रुमा भूमिश्चिन्तामणिगणमयी तोयममृतम् ।
कथा गानं नाट्यं गमनमपि. वंशी प्रियसखी
चिदानन्दं ज्योतिः परमपि तदास्वाद्यमपि च ॥६५

दोहा—इष्टदेव भजनीय निज श्री गोविंद गुण गाय ।
लोक विसिष्ट जु तासु कौ सो वरणत सुष पाय ॥४२

चौ०—व्रज सुंदरि जहँ वसै अनंता । सव के कंत एक भगवंता ॥
एहि कहने की व्यंगि अनूपा । सुनहु चित दै है सुष रूपा ॥
परनारायणादि जे कोई । तिनके लोक सुभग है जोई ॥
सवतें अधिक दिव्य एहि जानू । अरु अच्युत अनादि करि मानू ॥
जह द्रुम सकल कल्पतरु रीती । सव कहु सव प्रद सहज सुप्रीती॥
भूमि आदि सव एहि गुण लायक । कामद तरु से सव सुषदायक ॥
छिति पुनि सव कहँ सव सुष देई । कौस्तुभ मनि की कहा चलेई॥
पय जहँ अमृत स्वादु गुण करई । अमृत तासु छवि नहि अनु हरई॥
वंशी प्रिय सखीति इमि गाये । तासु अर्थ एह सुभग सुहाये ॥
कृष्णदेव की अति सुषकारी । जा धुनि सुनि मोहै वृज नारी ॥
कह लौ कहौ तासु अधिकाई । चिदानंद रूप सुख दाई ॥
अपर वस्तु तहँ जहँ लगि जेती । रवि ससि सरिस प्रकासक तेती॥

छंद—तेती प्रकाशक अहै संतत भूमि व्रज अति सोहनी ।
इमि कही गौतमि तंत्र यह शशि पूर्ण सम नित जोहनी॥
तह परम पद को अरथ ऐसे सुनिय श्री शुक हु कही ।
जहँ लगि प्रकासक तेज सव तेहि कौ प्रकाशी यह सही ॥४३
तह भोग्य वस्तु अनेक है चितछक्ति मय सघ जानहू ।
सोइ हितू गोपन को देषायो लोक अद्भुत मानहू ॥

अति जोति मय सब दिव्य ठामन निरषि सक कोउ अनहू ।
पुनि अस्वसिर जो पंच रात्री तहाँ श्रुति इमि गानहू ॥४४

श्लोक—स यत्र क्षीराब्धिः स्रवति सुरभिभ्यश्च सुमहान्
निमेषार्द्धाख्यो वा व्रजति नहि यत्रापि समयः ।
भजे श्वेतद्वीपं तमहमिह गोलोकमिति यं
विदन्तस्ते सन्तः क्षितिविरलचाराः कतिपये ॥६६

सोरठा—सुनु ब्रह्मन एक वात द्रव्य तत्व तो सो कहौ ।
सुरभि लोक जो ख्यात तहाँ वस्तु अद्भुत सवै ॥४५

चौ०-तहँ तरु सकल कल्पद्रुम जानू । सकल भोगप्रद सब तरु मानू ॥
गंध रूप अरु स्वादु सरूपा । पुष्प आदि जे हैं सुष रूपा ॥
हेय अंस बिनु स्रवतहं सुभाऊ । त्वचा बीच कठिनाशन काऊ ॥
केवल रस रूपा सुषदायक । श्री गोलोक सकल को नायक ॥
रसवत भौतिक द्रव्य जहाँ ते । हेम अंसयुत सकल तहाँ ते ॥
सो इत सब रस रूप सुभायन । अहै नित्य संतत सब ठायन ॥
सुरभिनते पय झरत निरंतर । क्षीर पयोधि जहाँ सुंदर वर ॥
सुनि वंशी धुनि सुरभि समूहा । सोइ आवेश द्रवै पय जूहा ॥
पुनि वंशी धुनि सुनि नर नारी । तहाँ वसै जे हरि हित कारी ॥
धुनि आवेश मत्त दिन राती । नहि जानहि कालहु गति ख्याती॥
अथवा अपर अरथ एहि केरो । कहियत तुम निज हिय मह हेरो॥
काल पराक्रम तहाँ न चलई । लोक नाम सुनि हिय अति डरई ॥

छंद—अति डरै जासो काल संतत लोक अति वह सोहनो ।
अरु श्वेत दीप सुभाय सुंदर विमल गुण मन मोहनो ॥
तहँ भूमि दिव्य वषानियो सो हेतु अव वरनन करौ ।
एक समै शक्र दिनेश मिलि सब गोप पितु पुर हर वरौ॥४६

सोरठा—पूछ्यो पितु के पास कहौ लोक कैसो अहै ।
तेहि हिय उमग हुलास कहन लाग अति प्रेम युत ॥४७

सुरभि लोक की बात मैं रंचक नहि कहि सकौं ।
सत्य कहौं हे तात तहा गम्य नहि काहु की ॥४८
गोकुल अरु गोलोक बरन्यो उभय अभेद लषु ।
तेहि सम अपर न ओक अमित नरन मैं कोउ लषैं ॥

दोहा—एहि विधि भगवत गुण कथन कही जु विविध प्रकार ।
अब गोविंद प्रसाद कछु पायो रुचिर विचार ॥४९

श्लोक—अथोवाच महाविष्णुर्भगवन्तं प्रजापतिम् ॥६७
ब्रह्मन् महत्त्वविज्ञाने प्रजासर्गे च चेन्मतिः ।
पञ्चश्लोकीमिमामाद्यां वत्स ! तत्त्वं निबोध मे ॥६८
प्रबुद्धे ज्ञानभक्तिभ्यामात्मन्यानन्दचिन्मयी ।
उदेत्यनुत्तमा भक्तिर्भगवत्प्रेमलक्षणा ॥६९॥
प्रमाणैस्तत्सदाचारैः सदाभ्यासैर्निरन्तरम् ।
बोधयन्नात्मनात्मानं भक्तिमप्युत्तमां लभेत् ॥७०

चौ०-सुनि ब्रह्मा के वचन अनूपा । बोले श्री हरि तेहि अनु रूपा ॥
प्रजा सर्ग करिबे चित चाहू । अरु विज्ञान महत् को लाहू ॥
अैसी अहै चाहना तोही । पंच श्लोकी सुनि चित जोही ॥
विद्या सुभग कहौं तोहि पासा । जा सुनि वो मन उपज हुलासा ॥
पंच श्लोकी कहत सुभायक । कृष्णदेव निज जन सुष दायक ॥
ज्ञान भक्ति जा कह जब भयेऊ । आत्मानंद चिन्मय चित बसेऊ ॥
तब उत्तम गरिष्ट प्रभु केरी । उपजै भक्ति प्रेम भर ढेरी ॥
भई प्रेम लक्षण जाही । भक्ति उत्तमा जा नर पाही ॥
सो कृत कृत्य भयो छन ताही । उज्जल रस उपज्यो जब जाही ॥
पुनि असेहि श्री शुक किय गानू । एकादशमह अहे प्रमानू ॥
तुम ह्वै ज्ञान सहित विज्ञानू । भक्ति भावयुत भजहु सुजानू ॥
प्रेम लक्षणा भक्ति बषाँना । साधन उभय तासु किय माना ॥

दोहा—ज्ञान भक्ति साधन युगल साधै जतन बनाय ।
प्रेम लच्छणा उपज तव भव रुज जाय नसाय ॥५०

सोरठा—ज्ञान भक्ति द्वै नाम साधन रूपा जो कहै ।
तेहि उपजन के काम कहत कृष्ण विधि सों गिरा ॥५१

चौ०—भगवत शास्त्र युक्त सतकरमा । करै निरंतर रहित विकरमा ॥
होइ जाहि जस गुर सत संगू । गहै तासु आचार अभंगू ॥
सोइ अभ्यास निरंतर करई । करि थिर चित औगुण परिहरई ॥
वार वार जव करि अभ्यासा । पुन्य पुंज करि विगत दुरासा ॥
तव यह स्वयं आपनो रूपा । हरि आश्रित अति शुद्ध अनूपा ॥
जीव रूप अनुभव भा जव ही । उत्तम भक्ति लहै तेहि तवही ॥
अैसेहि दशम सास्त्र के माही । शुक मुनि गिरा कही चित चाही॥
निज कृत तन यह लह्यो अनंता । पायो नर तन सवके अंता ॥
अखिल शक्ति धारो तुम नाथा । शक्ति अंश करि पुरुष अनाथा ॥
नर तन कोउ चतुर विवेकी । भिन्न जीव यह मति जिन टेकी ॥
निगमावयनं चरण निहारो । भव रुज हरण अभय हितकारी ॥
करि विश्वास भजै दिन राती । जग सुष तुच्छ न तिनहि सुहाती ॥

श्लोक—यस्याः श्रेयस्करं नास्ति यया निर्वृत्तिमाप्नुयात् ।
या साधयति मामेव भक्तिं तामेव साधय ॥७१
धर्मान्न्यान् परित्यज्य मामेकं भज विश्वसन् ।
यादृशी यादृशी श्रद्धा सिद्धिर्भवति तादृशी ॥७२॥
कुर्वन्निरन्तरं कर्म लोकोऽयमनुवर्त्तते ।
तेनैव कर्मणा ध्यायन् मां परां भक्तिमिच्छति ॥७३
अहं हि विश्वस्य चराचरस्य
बीजं प्रधानं प्रकृतिः पुमांश्च ।
मयाऽऽहितं तेज इदं बिभर्षि
त्रिधे ! विधेहि त्वमथो जगन्ति ॥७४॥

इति श्रीब्रह्मसंहितायां मूलसूत्राख्यस्य पंचमोऽध्यायः ॥५॥

दोहा–निज मुख श्री भगवंत हरि कहत कंज सुत याहि ॥
प्रेम भक्ति संतत करहु अपर साधिवो नाहि ॥५२॥
सोरठा–जाहि भक्ति करि जीव पावै परम निवृत्ति सुष।
अपर न झाकै सीव प्रेम लच्छणा साध्य जेहि ॥५३
कैसी है वह भक्ति मोहि करावै तासु वस।
असी है तेहि शक्ति प्रेम लच्छणा नाम जेहि ॥५४
दोहा–पुनि उज्जल रस भक्ति वह संतत साधहु ताहि।
सकल कामना रहित मन इमि कह्यो श्री पति वाहि ॥५५
सोरठा–अपर धर्म कहु त्यागि मोहि भजौ विश्वास युत।
जेहि जस श्रद्धा जानि लहै सिद्धि तेहि ताहि सम ॥५६
चौ०-द्वितिय भागवत मह एहि रीती। कही मुनीस हिये अति प्रीती ॥
काम सहित कै कोउ गत कामा। मोच्छ काम कोउ है सुष धामा ॥
जे उदार बुद्धि नर कोऊ। उत्तम भगति जोग करि सोऊ ॥
भजहिं कृष्ण पद पंकज रूरा। परम पुरुष हरि सव गुण पूरा ॥
अव हरि अपर कहत कछु वैना। जानि कंज सुअन हिय चैना ॥
सुनि हे विधि मम वचन अनूपा। सृष्टि तोरि फल लह सुषरूपा ॥
तासु हेतु सुनु तैं चितलाई।। तू मम किंकर है सुषदाई ॥
जग चर अचर जहां लगि जेतो। मम आधीन जानु सव तेतो ॥
सव को वीज श्रेष्ठ मै अहऊ। अपर न मो विनु सत इमि कहऊ ॥
प्रकृति पुरुष युत जगत अनेका। द्रष्टा तासु अहो मैं एका ॥
कह लौ कहौ तोहि ते आदी। सव प्रपंच अरु वस्तु सुषादी ॥
मूल सकल कौ मै अषिलेसा। अव सुनु तो कह करौ निदेसा ॥
छंद–तोहि करउ निदेसा सुनु उपदेसा शक्ति परम तोहि दे उमही।
मम शक्ति अनूपा सव सुष रूपा तेज महा तेहि माह सही ॥
निज तेज अपारू अतिगुण भारू देउ तोहि लै चित्त गही ॥
हिय वंछित तोरा होइ न थोरा अै है सिधि सव तोहि यही ॥५७

दोहा—पाइ तेज मम सुभग अति तावल ते बल तोहि ।
ह्वै है अमित प्रकार गुण रचहु सृष्टि चित जोहि ॥५८

सोरठा-प्रभु आयसु विधि पाइ हरसित हिय रचना रची ।
अग जग यह समुदाइ जो जेहि लायक तस कियेउ ॥५९

है यह सब सुधासार कंज सुअन की संहिता ।
पुनि न लहै संसार जो याकौ रस हिय चुभै ॥६०

कठिन संस्कृत जानि टीका यह दिग दरसनी ।
रामकृष्ण मन आनि भाषा याकी होइ भलि ॥६१

तासु हेतु पहिचानि राम कृपा भाषा रची ।
है सज्जन सुषदानि मोहि न दीजो दोष कछु ॥६२

भनित मोरि नहि आहि शब्द अनादिक श्रुति कहै ।
मज्जन करौ चित चाहि ब्रह्म संहिता विसदरस ॥६३

इति श्री ब्रह्मसंहिता दिग्दरसनी नाम टीका तस्य भाषा सम्पूर्णं

सुर वैद्य अरु युग्म वसु इंदु सु वत्सर जानु ।
आश्विन कृष्णा भानु तिथि शशि सुत वार प्रमानु ॥१॥

लिखितं दुवे लक्ष्मीनारायणस्येदं ॥श्री कृष्ण॥

गौड़ीयग्रन्थगौरव :—

सानुवाद संस्कृत भाषा में प्रकाशित—

१—अर्च्चाविधिः (संगृहीत) ।)
२—प्रेमसम्पुटः (श्रीविश्वनाथचक्रवर्त्तीकृत) ।)
३—भक्तिरसतरङ्गिणी (श्रीनारायणभट्टजीकृता) १)
४—गोवर्द्धनशतक (श्रीकेशवाचार्य्य कृत) ।)
५—चैतन्यचन्द्रामृत और सङ्गीतमाधव (श्रीप्रबोधानन्द-सरस्वतीजी कृत) १।)
६—नित्यक्रियापद्धतिः (संगृहीत) ॥=)
७—व्रजभक्तिविलासः (श्रीनारायणभट्टजी कृत) २॥)
८—निकुञ्जरहस्यस्तवः (श्रीमद्रूपगोस्वामी कृत) ।)
९—महाप्रभुग्रन्थावली (श्रीमन्महाप्रभुमुखपद्मविनिर्गता) ।—)
१०—स्मरणमङ्गलस्त्रोत्रम् (श्रीमद्रूपगोस्वामिजीकृत) ॥=)
११—नवरत्नम् (श्रीहरिरामव्यासजी कृत) =)।
१२—गोविन्दभाष्यम् (श्रीपादबलदेवजी कृत) ४॥)
१३—ग्रन्थरत्नपंचकम् १॥)
[१] श्रीकृष्णलीलास्तवः (श्रीपादसनातनगोस्वामि कृतः)
[२] श्रीराधाकृष्णगणोद्देशदीपिका (श्री श्रीरूपगोस्वामिजीकृता
[३] श्रीगौरगणोद्देशदीपिका (श्रीकविकर्णपूरजी कृता)
[४] श्रीव्रजविलासस्तवः (श्रीश्रीरघुनाथदासगोस्वामिजी कृत)
[५] श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः (श्रीविश्वनाथ चक्रवर्तीजी कृत)
१४—श्रीमहामन्त्रव्याख्याष्टकम (सञ्चित) ।)
१५—ग्रन्थरत्नषट्कम् (सञ्चित) ॥)
१६—श्रीगोवर्द्धनभट्टग्रन्थावली ॥=)
१७—सहस्रनामत्रयम् अथवा ग्रन्थरत्ननवकम् ॥)
१८—श्रीनारायणभट्टचरितामृतम् (श्रीजानकीप्रसादगोस्वामिकृत) ॥)
१९—उद्धवसन्देशः (श्रीमद्रूपगोस्वामिविरचितः) ।=)
२० हंसदूतम (श्रीमद्रूपगोस्वामिविरचितम) २॥)
२१—श्रीमथुरामाहात्म्यम (श्रीमद्रूपगोस्वामिविरचितम) ॥=)
२२—मुरलीमाधुरी (संचित) ।)

२३–राधाकृपाकटाक्षस्तोत्रम् =)
२४–श्रीपदांकदूतम् (श्रीकृष्णदेवजी कृत) ||)
२५–श्रीश्रीशुकदूत महाकाव्यम् (श्रीनन्दकिशोर गो० कृत) १||)

व्रजभाषा में प्रकाशित प्राचीन पुस्तकें—

१. गदाधरभट्टजी की वाणी (राधेश्याम गुप्ताजी से प्रकाशित १)
२. सूरदासमदनमोहनजी की वाणी ,, |||)
३. माधुरीवाणी (माधुरीजी कृता) ||=)
४. वल्लभरसिकजी की वाणी |=)
५. गीतगोविन्दपद (श्रीरामरायजी कृत) |)
६. गीतगोविन्द (रसजानिवैष्णवदासजी कृत) |)
७. हरिलीला (ब्रह्मगोपालजी कृता) =)
८. श्रीचैतन्यचरितामृत (श्रीसुबलश्यामजी कृत) ४||)
९. वैष्णववन्दना (भक्तनामावली) (वृन्दावनदासजीकृता) =)
१०. विलापकुसुमाञ्जलि (वृन्दावनदासजी कृता) |)
११. प्रेमभक्तिचन्द्रिका (वृन्दावनदासजी कृता) |)
१२. प्रियादासजी की ग्रन्थावली |=)
१३. गौराङ्गभूषणमञ्जावली (गौरगनदासजी कृता) |)
१४. राधारसणरससागर (मनोहरजी कृता) |)
१५. श्रीरामहरिग्रन्थावली (श्रीरामहरिजी कृता) |-)
१६. भाषाभागवत (दशम, एकादश, द्वादश) (श्रीरसजानिवैष्णवदासजी कृत) १)
१७. श्रीनरोत्तमठाकुरमहाशय की प्रार्थना ||)
१८. संप्रदायबोधिनी (कवित्रमनोहरजीकृता) =)
१९. व्रजमण्डलदर्शन (परिक्रमा) १)
२०. भाषाभागवत (महात्म्य, प्रथम, द्वितीय स्कंध) ||=)
२१. कहानीरहसि तथा कुंवरिकेलि (श्रीललितसखीकृत) |)

पुस्तक मिलने का पता तथा वी० पी० आदि भेजने का पता—

(१) राधेश्याम गुप्ता बुकसेलर, पुरानाशहर, (वृन्दावन)

मुद्रक—रमनलाल बंसल, पुष्पराज प्रेस, मथुरा।